दिसंबर 2002

मूल्य : सात रुपये

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

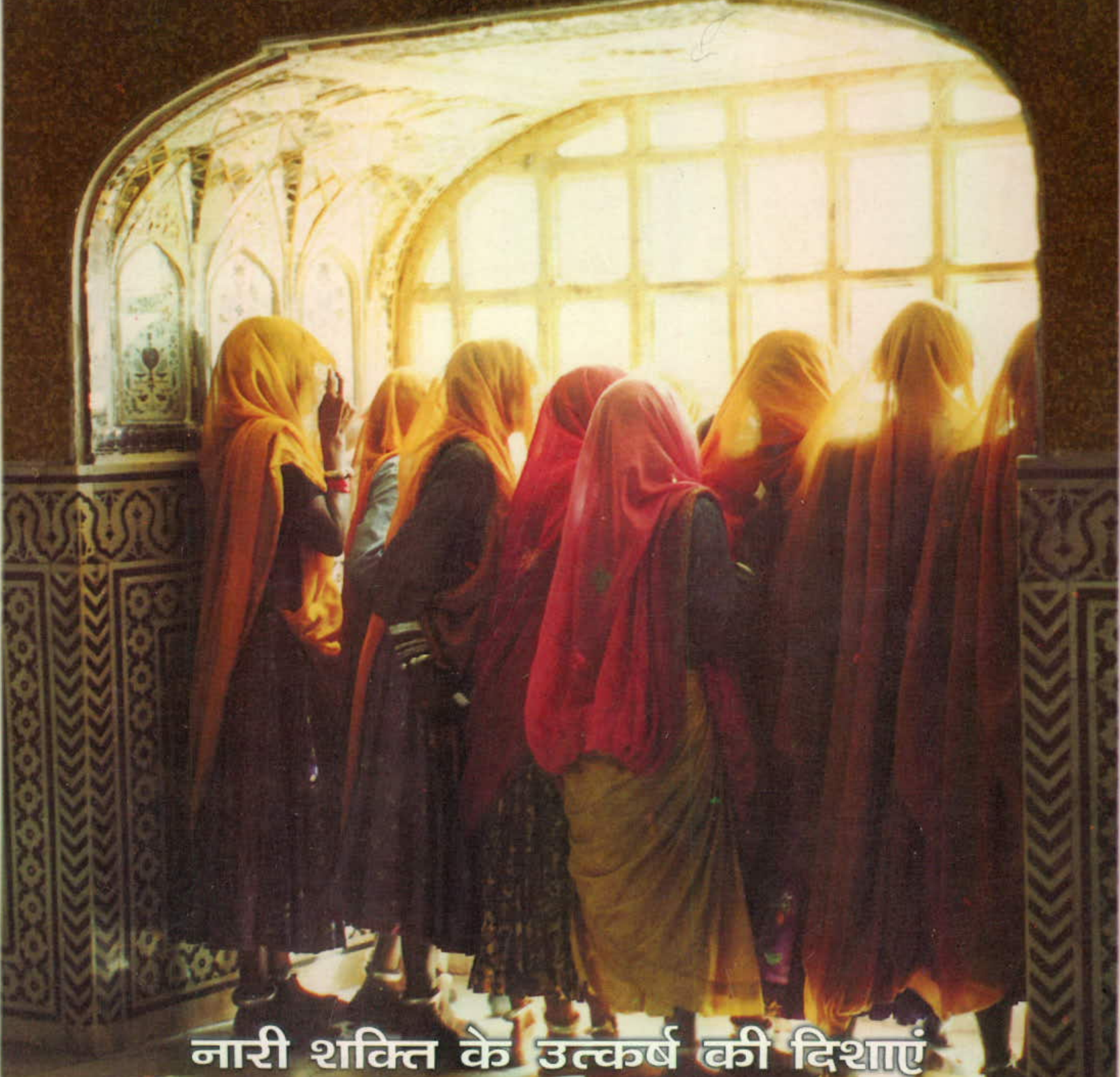

नारी शक्ति के उत्कर्ष की दिशाएं

अद्यतन

सूखा प्रभावित किसानों से ऋण और ब्याज की वसूली पर रोक

प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने सूखे से प्रभावित किसानों से ऋण और ब्याज की वसूली पर रोक लगाने की घोषणा की है। यह राहत चालू वित्त वर्ष के लिए है। केंद्र सरकार सूखे से प्रभावित 14 राज्यों के लिए विपदा राहत कोष से पहले ही 1,186 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता दे चुकी है। इसके अतिरिक्त 1,500 करोड़ रुपये मूल्य का 13.25 लाख टन खाद्यान्न अब तक राज्य सरकारों को उपलब्ध कराया जा चुका है।

प्रधानमंत्री ने कहा है कि देश में सूखे की गंभीर स्थिति को देखते हुए किसानों को फसल के लिए दिए गए ऋण के भुगतान में राहत देने की आवश्यकता है, यह राहत बागान क्षेत्र सहित सूखा प्रभावित सभी क्षेत्रों के किसानों को मिलेगी। श्री वाजपेयी ने कहा है कि सरकार किसानों की दिक्कतों को कम करने के लिए कृत संकल्प है और उन्हें आशा है कि इन उपायों के बाद राज्य सरकारें भी इस स्थिति से निपटने के लिए हर स्तर पर कदम उठाएंगी ताकि किसानों तक इसका पूरा लाभ पहुंच सके।

प्रधानमंत्री ने यह भी घोषणा की कि कॉफी उत्पादकों को दिए गए ऋण और ब्याज के भुगतान कार्यक्रम में परिवर्तन करके इसकी अवधि 11 वर्ष तक की जा रही है। बागान क्षेत्र के हितों की रक्षा के लिए पांच अरब रुपये का एक विशेष कोष बनाया जाएगा। साथ ही बागान क्षेत्र में प्रसंस्करण उद्योग के आधुनिकीकरण के लिए केंद्र सरकार हर संभव सहायता देगी। उन्होंने कहा कि देश में सूखा प्रभावित राज्यों को खाद्यान्न और आर्थिक राहत प्रदान करने के लिए उप प्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी की अध्यक्षता में गठित कार्यदल की शीघ्र ही एक और बैठक होगी।❑

दसवीं पंचवर्षीय योजना को केंद्रीय मंत्रिमंडल की स्वीकृति

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने दसवीं पंचवर्षीय योजना को स्वीकृति प्रदान कर दी है। इसमें आठ प्रतिशत वार्षिक विकास दर हासिल करने का लक्ष्य रखा गया है। योजना के दस्तावेज को जल्द ही राष्ट्रीय विकास परिषद की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाएगा।

केंद्रीय मंत्रिमंडल की बैठक के बाद योजना आयोग के उपाध्यक्ष कृष्ण चंद्र पंत ने यह जानकारी दी। उन्होंने कहा कि आठ प्रतिशत वार्षिक दर का लक्ष्य हासिल करना कठिन अवश्य है लेकिन असंभव नहीं।

उन्होंने कहा कि दसवीं पंचवर्षीय योजना में सिंचाई सुविधा और कृषि के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। योजना अवधि में पांच करोड़ अतिरिक्त रोजगार पैदा करने का लक्ष्य रखा गया है। ये रोजगार गैरसरकारी क्षेत्रों में बढ़ाए जाने की उम्मीद है। योजना आयोग के उपाध्यक्ष ने कहा कि योजना के लिए आवश्यक संसाधन जुटाने के अलावा शासन व्यवस्था में सुधार और विकास पर निरंतर निगरानी जैसे मुद्दों को रेखांकित किया जाना जरूरी है। उन्होंने बताया कि दसवीं योजना के दस्तावेज तीन हिस्सों में हैं। इनमें क्षेत्रवार नीतियों और कार्यक्रमों के अलावा राज्यों की योजनाओं और रणनीति को भी शामिल किया गया है। दस्तावेज में निर्धारित लक्ष्य इस प्रकार हैं : गरीबों की संख्या 26 प्रतिशत से घटाकर वर्ष 2007 तक 21 प्रतिशत करना, जनसंख्या वृद्धि दर मौजूदा 21.3 प्रतिशत से घटाकर वर्ष 2011 तक 16.2 प्रतिशत करना, रोजगार के इच्छुक लोगों के लिए पांच साल के दौरान पांच करोड़ रोजगार देना, 2003 तक सभी बच्चों को स्कूली शिक्षा देना, पुरुष और महिला साक्षरता दर में अंतर को घटाकर 50 प्रतिशत करना, वर्तमान साक्षरता दर को 65 प्रतिशत से बढ़ाकर 2007 तक 75 प्रतिशत करना। सभी गांवों में पेयजल उपलब्ध कराना, शिशु मृत्युदर को प्रति एक हजार नवजातों पर 72 से घटाकर 2007 तक 45 करना, जच्चा मृत्युदर को प्रति एक हजार माताओं पर मौजूदा 4 से घटाकर 2007 तक 2 करना, वन क्षेत्र को 19 प्रतिशत से बढ़ाकर 2007 तक 25 प्रतिशत करना तथा प्रमुख नदियों के प्रदूषित हिस्सों के शुद्धिकरण को शामिल किया गया है। ❑

बलात्कार मामले में साक्ष्य कानून बदलने की तैयारी

प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में संपन्न केंद्रीय मंत्रिमंडल की एक बैठक में बलात्कार की शिकार महिला को अदालत में जिरह के दौरान दुश्चरित्र सिद्ध करने के बचाव पक्ष के प्रयासों पर अंकुश लगाने के इरादे से भारतीय साक्ष्य कानून में महत्वपूर्ण संशोधन करने का निर्णय किया गया है। यह जानकारी सूचना एवं प्रसारण मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने दी।

श्रीमती स्वराज ने बताया कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 155 की उपधारा को समाप्त करके धारा 146 में नया उपबंध जोड़ने का फैसला किया गया है। धारा 155 की उपधारा 4 के तहत अभी तक पीड़ित महिला को दुश्चरित्र सिद्ध करने का प्रयास किया जाता था। नए प्रावधान के बाद बलात्कार की शिकार किसी भी महिला के चरित्र के बारे में कोई सवाल नहीं पूछा जा सकेगा। सूचना एवं प्रसारण मंत्री ने बताया कि इसी तरह सती निरोधक कानून के तहत एक दिन की भी सजा मिलने के आधार पर ऐसे व्यक्ति को चुनाव लड़ने के अयोग्य करार देने का प्रावधान करने के इरादे से जन प्रतिनिधित्व कानून में भी संशोधन किया जाएगा। अभी तक सती निरोधक कानून के तहत छह महीने अथवा इससे अधिक की सजा प्राप्त व्यक्ति चुनाव नहीं लड़ सकता। संशोधन के बाद एक दिन सजा पाया व्यक्ति भी चुनाव नहीं लड़ सकेगा। दोनों महत्वपूर्ण संशोधनों के बारे में संसद के शीतकालीन सत्र में विधेयक पेश किए जाएंगे। ❑

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 48 ● अंक : 2

कार्तिक–अग्रहायण 1924

दिसंबर 2002

कार्यकारी संपादक
राकेश रेणु

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पत्र–व्यवहार

संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 3015014, फैक्स : 011–3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

आवरण चित्र
सर्वेश

आवरण
संतोष वर्मा

फोटो सौजन्य
आईईसी डिवीजन, ग्रामीण विकास मंत्रालय

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

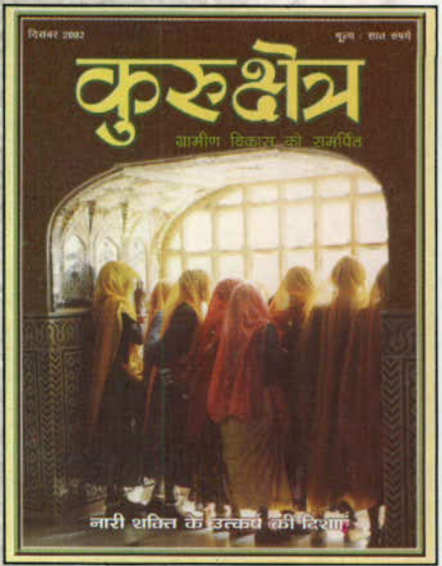

इस अंक में

लेख

● पंचायतों के जरिये ग्रामीण विकास में महिलाओं की भूमिका	डा. अर्चना सिन्हा	7
● विकास के दोराहे पर खड़ी जनजातीय महिलाएं	सुभाष सेतिया	16
● ग्रामीण महिलाओं के लिए विकास कार्यक्रम	डा. दिनेश कुमार शर्मा	19
● उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला शिक्षा	जे.एन. सिंह	22
● बिहार में पंचायतीराज और महिला भागीदारी	रामाज्ञा राय शशिधर	25
● मध्य प्रदेश पंचायतीराज में महिला प्रतिनिधियों का सबलीकरण	डा. डी. वर्मा	29
● गरीबी उन्मूलन में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका	डा. जदुनाथ प्रसाद वर्मा	31
● विकास की धारा के साथ ग्रामीण महिलाएं	ममता भारती	33
● गांव तथा परिवार के विकास में ग्रामीण महिलाओं की उद्यमिता	ज्योति यादव, नीलिमा कुंवर	39
● राजस्थान में मधुमक्खी पालकों का पहला जिला बना भरतपुर	सुबोध अग्रवाल	41

साहित्य

● हताशा (कहानी)	डा. विनोद कुमार सिन्हा	35
● तीन कविताएं	भारतेंदु मिश्र	38
● चार कविताएं	मनोज मोहन	

स्वास्थ्य

● सावधानी बरतें, एड्स से बचें	पी.के. जायसवाल	43

पुस्तक चर्चा

● प्रज्ञावेणु : संस्कृत से हिंदी अनुवाद की समस्याएं	डा. हेमंत जोशी	46
● पंचायतीराज व्यवस्था में दस्तक देती महिला	शमशेर अहमद खान	48

कुरुक्षेत्र की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में ए.के. दुग्गल, सहायक विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 6105590, फैक्स : 6175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मत–सम्मत

दोष किसका

कुरुक्षेत्र का अक्तूबर, 2002 अंक (वार्षिकांक) पढ़ा। निश्चय ही हम स्वतंत्र हैं, परंतु अभी भी आर्थिक दृष्टिकोण से हम पूर्णतया सुखी और समृद्ध नहीं हैं। एक सुखी और संपन्न है तो अनेक दुःखी और दरिद्र हैं, जिनका जीवनस्तर गिरा हुआ है। दरअसल हमारे देश की गरीबी का सारा दोष उस शिक्षा व्यवस्था का है, जो लार्ड मैकाले द्वारा इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रारंभ की गई थी। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा का नितांत अभाव है। प्राचीनकाल में हमारे देश के घर–घर में कुछ न कुछ उद्योग–धंधा चलता था। कहीं कपड़े बुने जाते थे, तो कहीं चरखा चलाया जाता था, कहीं गुड़ बनता था तो कहीं खिलौने। इसी तरह के हजारों छोटे–छोटे गृह उद्योगों से लोग जीविकोपार्जन किया करते थे, परंतु अंग्रेजों ने अपने देश की व्यापारिक समृद्धि के लिए यहां के गृह उद्योगों को न केवल नष्ट किया बल्कि ढाका और चंदेरी आदि के कारीगरों के हाथ तक कटवा दिए और धीरे–धीरे हम मशीनों के बाहुल्य के कारण अकर्मण्य हो गए। बाबू बनने की इच्छा तीव्रतर हो उठी, हम में आत्मनिर्भरता समाप्त हो गई, सदैव के लिए हम परमुखापेक्षी बन गए।

देश की दिनों–दिन बढ़ती जनसंख्या गरीबी की समस्या को और भी बढ़ा रही है। साधन की सुविधाएं और उत्पादन तो वही रहा, परंतु उपभोक्ता अधिक हो गए। एक दशक पहले तक कृषि विकास की दर तो ऊंची रही, किंतु गरीबी की दर कम नहीं हुई। चूंकि इस अवधि में कृषि विकास श्रम प्रधान नहीं रहा इसलिए श्रम की मांग नहीं बढ़ी। इसके बाद आर्थिक उदारीकरण का लाभ कुछ राज्यों ने अवश्य उठाया, किंतु अधिकांश कमजोर राज्य अभी तक इन सुधारों के साथ तालमेल नहीं बिठा पाए हैं। इसी कारण न तो हमारे यहां सही अर्थों में विकास हो रहा है और न ही गरीबी कम हो रही है।

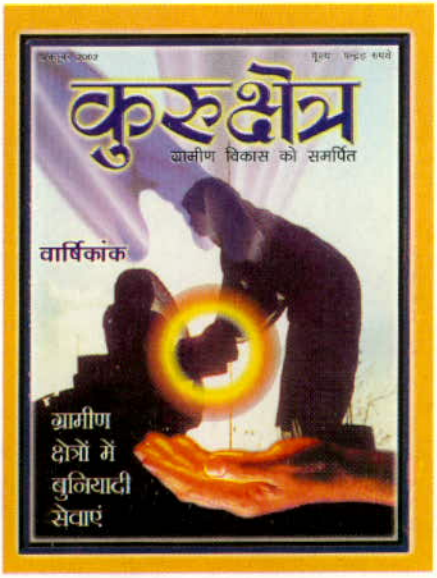

अगर हमारी सरकार सचमुच गरीबी को कम करना चाहती है तो सबसे पहले हमें अपनी शिक्षा पद्धति में परिवर्तन करना होगा। सैद्धांतिक शिक्षा से काम नहीं चल सकता। शिक्षा व्यावहारिक होनी चाहिए। शुरू से ही विद्यार्थियों में स्वावलंबन की भावना भरनी चाहिए। हमारे देश के पुराने उद्योग–धंधे जो नष्ट हो चुके हैं, उन्हें पुनः विकसित करना चाहिए, जैसे – सूत कातना, कपड़े बुनना, शहद तैयार करना, कागज तैयार करना आदि। अर्थात रोजगारपरक शिक्षा को ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तृत किया जाना चाहिए। इनके अतिरिक्त कृषि क्षेत्र से संबंधित सुधार को अपनाकर भ्रष्टाचार, कानूनों की कमजोरियां व अराजकता जैसे मामलों को नियंत्रित करना चाहिए।

एक समय वह भी था, जब भारत जगद् गुरु कहलाता था, तपस्या के पवित्र मंत्र यहां दुहराए जाते थे, ताकि विश्व पर मंडराते हुए काले अभिशापों को दूर किया जा सके। निरंतर विकास की चोटी को छूता हुआ भारतीय समाज अमरावती की तरह ही युग को आशीर्वाद लुटाता हुआ गतिशील था। वैदिककाल से महाभारत काल तक संपूर्ण विश्व में भारतीय ज्ञान–विज्ञान का प्रसार था किंतु उसके बाद ह्रास–चक्र चला। आज प्रत्येक क्षेत्र में पश्चिमी देश हमसे आगे हैं तो प्रश्न उठता है कि हम क्यों पिछड़ गए? सीधा–सा उत्तर है – बढ़ती हुई जनसंख्या, दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली एवं गलत नीतियों के कारण।

चन्द्र किशोर जायसवाल
ग्रा–पो : प्रतापगंज
जिला : सुपौल (बिहार)

नया कलेवर मन को छू गया

पिछले दो वर्षों से मैं *कुरुक्षेत्र* का नियमित पाठक हूं। पिछले कुछ अंकों से इस पत्रिका का नया कलेवर मन को छू गया है, जिसमें प्रत्येक अंक किसी न किसी विशेषांक को समर्पित होता है और जिसका संपूर्ण सार संपादकीय में झलकता है।

कुरुक्षेत्र का सितंबर 2002 अंक साक्षरता परिदृश्य को समर्पित था, जिसमें 93वां संविधान संशोधन से संबंधित लेख काफी अच्छा लगा और उप्र, राजस्थान, मप्र, बिहार एवं गुजरात की साक्षरता की स्थिति बताते लेख प्रतियोगी परीक्षार्थियों के लिए काफी उपयोगी हैं। शिक्षा नीति में आवश्यक परिवर्तन संबंधी लेख जानकारीपूर्ण रहा। जहां 'वर्तमान भारत में प्रौढ़ शिक्षा' लेख के माध्यम से समाज शिक्षा की महती आवश्यकता पर जोर डाला गया है, वहीं 'गोस्टा' कहानी के द्वारा इसका महत्व पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है। सफलता की कहानी–दो (लोक जुंबिश परियोजना) मुझे

विशेष रूप से पसंद आई है, इसीलिए मैं आपसे यह विनम्र निवेदन करता हूं कि इस परियोजना के बारे में विस्तृत जानकारी आगामी किसी अंक में उपलब्ध कराएं (कार्यविधि एवं प्रक्रिया संबंधी)।

स्वास्थ्य स्तंभ में शाकाहार पर विशेष लेख देकर उसकी उपयुक्तता को साबित कर अच्छा प्रयास किया गया है, इसके लिए मेरा साधुवाद स्वीकार करें!

पुष्पराज सिंह
11/398, इंदिरानगर
जिला : रीवा (मप्र)

ताकि निरक्षरता के खिलाफ जंग अधूरी न रहे!

कुरुक्षेत्र सितंबर–2002 के अंक में डा. आशा शर्मा का आलेख 'शिक्षा का लोकव्यापीकरण एक अवलोकन' तथा अनिल चमड़िया का आलेख 'शिक्षा से दूर रोटी, कपड़ा और जीवन का असबाब चुन रहा बचपन' देश की साक्षरता और शिक्षा परिदृश्य का पोस्टमार्टम करता प्रतीत हुआ।

निःसंदेह यह कहना कोई अतिशयोक्ति न होगी कि शिक्षा किसी भी सभ्य समाज की स्वस्थ पहचान होती है। विश्व के लगभग सभी समाजों और सभी कालों में शिक्षा का महत्व सर्वोपरि बना रहा है। जिन समाजों में शिक्षा, खासकर वैज्ञानिक व प्राथमिक शिक्षा, का आलोक नहीं फैला वे आज भी कूप–मंडूक, अतीतजीवी और अव्यावहारिक बने हुए हैं। यह कितने शर्म व दुर्भाग्य की बात है कि जिस भारतवर्ष की *तमसो मा ज्योतिर्गमय* की शिक्षा से पूरा विश्व आलोकित हुआ उस सुजला, सुफला, शस्य–श्यामला मुल्क में शिक्षा के प्रति उदासीनता का आलम यह है कि अफ्रीका और पूर्व एशिया के गरीब देशों से भी भारत पीछे छूट गया है। आंकड़े दर्शाते हैं कि देश में स्कूल जाने योग्य उम्र के 11 करोड़ बच्चों में से करीब 3.25 करोड़ बच्चे स्कूल से बाहर ही रहते हैं। स्कूल जाने वालों में से करीब 48 प्रतिशत कक्षा पांच उत्तीर्ण करने से पहले ही स्कूल छोड़ देते हैं जबकि इंडोनेशिया में 90 प्रतिशत, चीन में 94 प्रतिशत और श्रीलंका में 98 प्रतिशत बच्चे कक्षा पांच से आगे की पढ़ाई करते हैं। सत्य इतने तक ही सीमित नहीं है। भारत में जहां लाखों–करोड़ों रुपये खर्च करने के बावजूद प्रौढ़ साक्षरता की दर लगभग 52 प्रतिशत है जबकि अफ्रीका के सबसे पिछड़े देशों में यह दर 58 प्रतिशत और पूर्वी एशिया में 55 प्रतिशत है। कमोबेश ऐसी ही स्थिति आधी आबादी (महिला) की साक्षरता की है। जहां भारत में महिला साक्षरता दर अभी भी महज 38 प्रतिशत है वहीं पूर्वी एशिया में 76 प्रतिशत तथा अफ्रीका के उप–सहारा देशों में 47 प्रतिशत है।

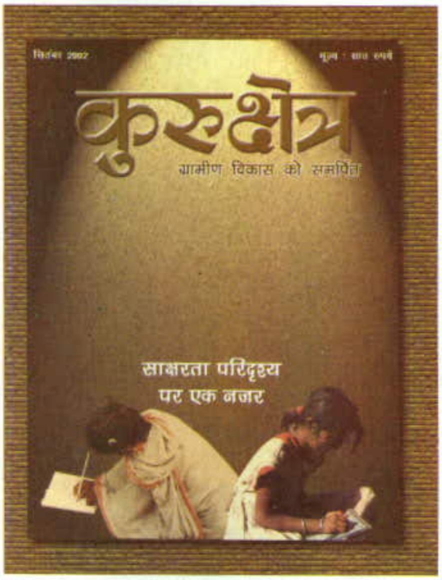

यह विडंबना नहीं तो और क्या है कि देश की आधी से अधिक आबादी जिन स्कूलों पर निर्भर है, उनकी दशा में कोई बुनियादी बदलाव नहीं आ पाया है। गौरतलब है कि दिल्ली स्कूल आफ इकोनोमिक्स तथा इंडियन इंस्टीट्यूट आफ सोशल साइंसेज के एक सर्वेक्षण के अनुसार देश के 90 प्रतिशत स्कूलों में शौचालय की कोई व्यवस्था नहीं है जबकि 63 प्रतिशत स्कूलों की छतें नहीं हैं, 58 प्रतिशत स्कूलों में पीने के पानी तथा 48 प्रतिशत स्कूलों के पास खेलने के मैदान का अभाव है एवं 27 प्रतिशत स्कूल बिना ब्लैकबोर्ड के ही चल रहे हैं। 1991–92 में सकल घरेलू उत्पाद का 4 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय होता था जबकि 2000–01 में यह महज 3 प्रतिशत रह गया है। जबकि प्रो. अमर्त्य सेन के अनुसार शिक्षा पर किसी भी देश के जीडीपी का 6 से 8 प्रतिशत खर्च किया जाना ही संतोषजनक है। हालांकि भारतीय संविधान के नीति–निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 45, मानवाधिकार घोषणा के लेख 26, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986–87 और 2001 के 93वें संविधान संशोधन शैक्षणिक यात्रा के महत्वपूर्ण पड़ाव हैं जहां से सरकार की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। लेकिन सिर्फ नीति बना देने से क्या होगा, वह तो तब तक 'ड्राइंग रूम पालिटिक्स' का ही अंग बना रहेगा जब तक कि उसका सही व उचित क्रियान्वयन व मूल्यांकन नहीं हो।

मेरी राय में देश की सभी समस्याओं को हल करने का एकमात्र तरीका साक्षरता को बढ़ाना है। अतः सरकार, शिक्षक, अभिभावक सभी को बच्चों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना होगा – सरकार शिक्षा पर व्यय की जाने वाली धन राशि बढ़ाए, विधायकों तथा अन्य जनप्रतिनिधियों को मिलने वाली विशेष निधि का कम–से–कम 30 प्रतिशत क्षेत्र के स्कूलों पर खर्च करना अपरिहार्य बनाया जाए, शिक्षा सस्ती बनाई जाए ताकि सर्व शिक्षा अभियान को गति मिल सके। अन्यथा निरक्षरता के खिलाफ हमारी लड़ाई खोखली ही साबित होगी।

हर्ष वर्द्धन कुमार
सृष्टि रूपा भवन, सरस्वती लेन
पूर्वी लोहानीपुर, पटना–800003 (बिहार)

शिक्षकों की महत्ता को नजरअंदाज न करें

कुरुक्षेत्र का सितंबर 2002 अंक जो साक्षरता परिदृश्य पर आधारित है, एक संग्रहणीय एवं प्रेरणादायी अंक है। इस में संपादकीय, शिक्षा का लोकव्यापीकरण, 93वां संविधान संशोधन, कितनी व्यावहारिक है शिक्षा नीति में सुधार की जरूरत इत्यादि आलेख बेहद सटीक हैं और प्राथमिक शिक्षा में सुधार हेतु कारगर सिद्ध हो सकते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में देश के सभी राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों की सूची में सबसे नीचे स्थित बिहार के लिए तो यह अति महत्वपूर्ण एवं लाभदायक है। लेकिन इन सब बातों के अलावा विशेषकर बिहार के लिए मैं यह कहना चाहूंगा कि यहां शिक्षा का उजियारा तभी फैल सकेगा जब इसके

आधारस्तंभ–विद्यार्थी शिक्षक, अभिभावक एवं सरकारी प्रयास – ये सब अगर अपना संपूर्ण योगदान देने का प्रयास करेंगे।

बिहार जैसे पिछड़े प्रदेश में एक शिक्षक की अहमियत न के बराबर रह गई है। यहां के शिक्षकों को बराबर गैर शैक्षणिक कार्यों में लगाया जाता है। समय पर वेतन नहीं मिलना तथा दूर–दराज के निर्जन गांवों में शिक्षण गतिविधियां चलाना, जहां नक्सलियों के हमले की बराबर आशंका रहती हो, इन सब स्थितियों से वे हमेशा असंतुष्ट तथा सशंकित रहते हैं। अतः जब तक शिक्षकों की महत्ता को नजरअंदाज किया जाता रहेगा तब तक सभी शिक्षा अभियान एवं परियोजनाएं बेकार ही सिद्ध होंगी जो इसके विकास के लिए चलाए जा रही हैं। कहा भी गया है – "एक असंतुष्ट शिक्षक एक अयोग्य शिक्षक से ज्यादा खतरनाक होता है।"

अरविन्द कुमार
ग्रा–पो : भिन्दासपुर, थाना : बेलागंज
जिला : गया (बिहार)

प्रोत्साहन की जरूरत

माह सितंबर–2002 का साक्षरता पर केंद्रित *कुरुक्षेत्र* का अंक विशेष पसंद आया। साक्षरता पर एक ही अंक में इतनी सारी जानकारियां प्रस्तुत करने के लिए धन्यवाद स्वीकार करें। शिक्षा एक मूलभूत आवश्यकता है, परंतु आजादी के 54 वर्षों बाद भी यह अपने लक्ष्य के अनुरूप जन–जन तक नहीं पहुंच पाई है। लालफीताशाही, आर्थिक अभाव, राजनीतिक गतिरोध के बीच में सरकार का प्रयास सराहनीय है, लेकिन यह भी सत्य है कि बिना जन समर्थन के अशिक्षारूपी राक्षस पर विजय पाना नामुमकिन है। गांवों में जनसामान्य का दृष्टिकोण काफी चिंतनीय है। अब भी कतिपय ग्रामीण अपने बच्चों को स्कूल भेजने के बजाय घर के काम–धंधे में ही लगाए रखना चाहते हैं। सरकार द्वारा बच्चों की स्कूल में उपस्थिति बनाए रखने के लिए बाल–पोषाहार वितरित कराया जा रहा है। कतिपय अभिभावक अपने बच्चों को स्कूल तभी तक ही भेजते हैं, जब तक कि बाल–पोषाहार नहीं मिल जाता। उसके बाद स्थिति फिर वही ढाक के तीन पात वाली हो जाती है। इसीलिए लगता है कि कहीं न कहीं हमारी नीतियों में बदलाव की जरूरत है। प्रौढ़ों को भी साक्षर करने के लिए उन्हें कुशल प्रोत्साहन प्रदान किया जाना चाहिए। यदि शिक्षार्थियों (बच्चों और प्रौढ़ों) के मन में शिक्षा प्राप्त करने के प्रति ललक भरी जा सके, तो समझा जाना चाहिए कि राष्ट्रपति डा. कलाम के 'सपनों का भारत' बनते देर न लगेगी।

मुन्नू लाल
ग्राम : पुरुषोत्तमपुर
पो : सोनपुर, वाया : गैंसड़ी
जिला : बलरामपुर (उप्र)

प्रतिदिन निखरता रंग रूप

ग्रामीण विकास मंत्रालय की
कुरुक्षेत्र मासिक भी बहुत खूब
दिन प्रतिदिन निखरता रंग रूप,
देती है यह सूचनाओं की धूप
मिटाती है अंधकार, विद्रूप।
शिक्षा से दूर रोटी, कपड़ा और जीवन का
असबाब चुन रहा बचपन का क्या कहना;
सभी लेख, कहानी पढ़कर इसका
रह जाता मुझको क्या लिखना।
डा. आनंद किशोर की सही आवाज
शिक्षा नीति में सुधार की जरूरत आज।
डा. आशा शर्मा का एक विश्लेषण,
शिक्षा का लोकव्यापीकरण।
आशा रानी ने दिखलाई, प्रौढ़ शिक्षा की माया
राजनारायण बोहरे ने कहानी गोस्टा सुनाई।
धन्य हैं संपादक आप
धन्य हैं संपादक मंडल।

लखन रविदास
ग्राम : पैसरा, पोस्ट : गंगपाचो, वाया : बरकट्ठा
जिला : हजारीबाग, झारखंड–825323

सच्चाई का आईना

कुरुक्षेत्र का सितंबर का अंक पढ़ा इसमें ग्रामीण शिक्षा की दिशा में जिस तरह प्रयास किया गया वह सराहनीय है। अक्सर गांव में देखा और सुना है कि लोग हर समय दूसरों के प्रयास में असफलता देखते हैं, मगर यह असफलता उनसे भी जुड़ी है यह देखना भूल जाते हैं। यह *कुरुक्षेत्र* के इस अंक में समझाने का सफल प्रयास है।

देश में प्राथमिक शिक्षा की सुलभता हेतु अंत तक किए गए विभिन्न प्रयासों पर यदि नजर डालें तो निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। हम इस सच्चाई को नकार नहीं सकते।

रमेश मौजे
साईं चौक, खमारी गोंदिया–441613
(महाराष्ट्र)

समीक्षा का पैमाना

कुरुक्षेत्र का सितंबर अंक 'साक्षरता परिदृश्य पर एक नजर' ज्ञानवर्द्धक एवं संग्रहणीय है। यह अंक हम लोगों के लिए विश्लेषण एवं समीक्षा का एक पैमाना साबित होगा।

इस अंक की सभी सामग्री अच्छी एवं महत्वपूर्ण है तथापि 'शिक्षा का लोकव्यापीकरण एक अवलोकन', संपादकीय, 93वां संविधान संशोधन, कहानी 'गोस्टा', सफलता की कहानी–एक एवं दो अधिक प्रभावित करते हैं।

डा. आशा शर्मा का लेख तो चिंता में डुबो देता है। परंतु शिक्षा के क्षेत्र में समस्याओं के निदान एवं लक्ष्य की प्राप्ति हेतु आम जनता को जागरूक होने के साथ–साथ सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को दृढ़ संकल्प होकर ईमानदार प्रयास करना पड़ेगा। जैसा संपादकीय में उल्लेखित है, इसमें राज्य सरकार की भूमिका अहम हो जाती है।

राजनारायण बोहरे की कहानी 'गोस्टा' मध्य प्रदेश की ग्रामीण परंपरा और रीति–रिवाज को ग्रामीण शैली एवं कहावत के माध्यम से बड़े सहज एवं शालीन ढंग से पेश करती है।

इश्तियाक अहमद
ग्रा–पो : करमा, वाया : रामगढ़ कैंट
जिला : हजारीबाग (झारखंड)

संपादकीय

यदि हम विश्व इतिहास उलट कर देखें तो सहज ही इस तथ्य से अवगत हो जाएंगे कि मानव सभ्यता के अनेक महत्वपूर्ण पड़ाव महिलाओं की ऊर्जा, ओजस्विता और रचनात्मकता पर आधारित रहे हैं। यह प्रवृत्ति भारत में ज्यादा मुखर रही है। वस्तुतः भारत दुनिया के उन थोड़े से देशों में है जहां की संस्कृति और इतिहास में महिलाओं को सम्मानजनक स्थान प्राप्त है और जहां मनुष्य को मनुष्य बनाने में उनके अवदान को स्वीकार किया गया है। लेकिन यह इतिहास की बात है। विभिन्न कारणों से कालांतर में भारतीय समाज में स्त्रियों की पारिवारिक-सामाजिक स्थिति निरंतर कमजोर होती गई और उन्हें पुरुष समाज द्वारा आरोपित 'मर्यादा' और अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया गया। देश के अलग-अलग अंचलों से मीराबाई, जनाबाई, गुलबदन बेगम और चाँदबीबी जैसी स्त्री-शक्तियों की कौंध दिखाई पड़ती रही लेकिन उन्हें दबा देने की कोशिशें भी जारी रहीं। कुल मिलाकर भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति दोयम दर्जे की या उससे भी नीचे की बनी रही।

इस प्रवृत्ति में उन्नीसवीं सदी में बदलाव आना आरंभ हुआ जब नवजागरण काल में भारतीय फलक पर अनेक सुधारवादी व्यक्तित्व सक्रिय हुए। बंगाल में राजा राममोहन राय ने जहां सती प्रथा के खिलाफ मुहिम चलाई वहीं ईश्वरचंद्र विद्यासागर और गुजरात में दयानंद सरस्वती ने स्त्रीशिक्षा और विधवा विवाह जैसे मुद्दों को लेकर काम किया। महाराष्ट्र में सन् 1848 में सावित्रीबाई फुले ने लड़कियों के लिए पहला स्कूल पुणे में खोला। नारी उत्कर्ष की दिशा में यह एक विशिष्ट प्रयास था। यद्यपि हिंदी प्रदेशों में इस तरह के प्रयास कम ही हुए फिर भी समूचे भारत की महिलाओं में एक नई चेतना जाग्रत होने लगी थी।

बीसवीं सदी में इस प्रक्रिया को ठोस धरातल और शक्ति आजादी के बाद मिली। संविधान ने महिलाओं को समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई माना और उन्हें पुरुषों के बराबर दर्जा तथा समान अधिकार प्रदान किए। लेकिन वास्तविक शक्ति महिलाओं से अब भी दूर थी, खासकर ग्रामीण और जनजातीय समाजों की महिलाओं से। अतः सरकार ने वर्ष 2001 को राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण वर्ष के रूप में मनाने का फैसला किया।

अब दुनियाभर में महिलाओं को अधिकार-संपन्न बनाने के लिए उनकी स्थिति को प्रभावित करने वाले विभिन्न संगठनों और सत्ता संचालन का भार संभालने वाली जनतांत्रिक इकाइयों में आरक्षण प्रदान करने पर जोर दिया जाने लगा है। भारत ने इस प्रक्रिया की शुरुआत करते हुए सन् 1991 में ही 73वें संविधान संशोधन द्वारा देशभर की पंचायतीराज संस्थाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत स्थान आरक्षित कर दिया। ग्रामीण अंचलों और विभिन्न समूहों की महिलाओं को शक्ति-संपन्न बनाने की दिशा में यह एक क्रांतिकारी कदम साबित हुआ है। इस कदम के सकारात्मक परिणाम दिखाई देने आरंभ हो गए हैं। हालांकि, संक्रमणकाल में जैसा होता है, इस निर्णय के तोड़ जुटाने और प्रयोग में लाने की छिटपुट खबरें भी यहां-वहां से आ रही हैं। लेकिन इन जनतांत्रिक इकाइयों से जुड़ी महिलाएं जैसे-जैसे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होती जाएंगी, उनके अधिकार-वंचन की प्रक्रिया भी उसी गति से थमती जाएगी।

महिलाओं को जागरूक और सचेत बनाने की प्रक्रिया में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। 'कुरुक्षेत्र' के विभिन्न अंकों में हम शिक्षा के अधिकाधिक प्रसार और ग्रामीण समुदायों द्वारा इसमें अधिकाधिक भागीदारी पर बल देते आए हैं। फिर कहना चाहता हूं कि जितनी तेजी से हमारे गांवों की महिलाओं में शिक्षा की रोशनी फैलेगी, उतनी ही तेजी से वे स्वास्थ्य, गर्भधारण, जनसंख्या और रोजगार जैसे मुद्दों पर न केवल जागरूक बल्कि सक्रिय होती जाएंगी। पंचायतों में महिला प्रतिनिधियों को अधिकार-वंचित करने की खबरों को सरकार और विभिन्न एजेंसियां न केवल गंभीरता से ले रही हैं बल्कि उन्हें कम करने के प्रयास भी किए जा रहे हैं। संसद सहित विभिन्न विधायी संस्थाओं में भी महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण देने की प्रक्रिया चल रही है। संसद द्वारा इस बारे में निर्णय ले लिए जाने के बाद महिलाओं को और व्यापक शक्ति मिलेगी, ऐसा विश्वास है।

इस अंक की योजना हमने अपने पाठकों को नारी शक्ति के उत्कर्ष की विभिन्न दिशाओं और उन दिशाओं में चल रहे प्रयासों से अवगत कराने की जरूरत को ध्यान में रखकर की है। उम्मीद है हमारा यह प्रयास आपको पसंद आएगा। अपनी प्रतिक्रियाओं से अवगत कराना न भूलें। हमेशा की तरह हमें आपके खतों का इंतजार रहेगा। ❑

महात्मा गांधी सीडी

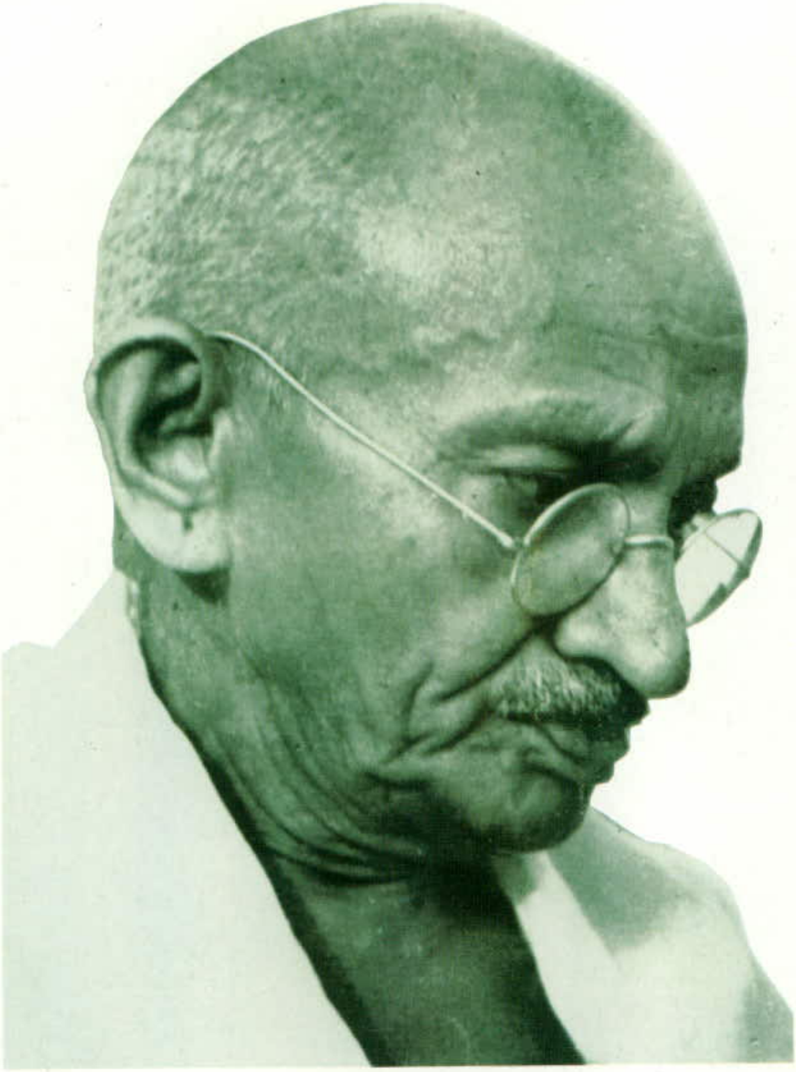

इस मल्टीमीडिया सीडी में
गांधीजी पर
30 मिनट की फिल्म फुटेज
550 से अधिक चित्र
करीब 15 मिनट की
गांधीजी की आवाज
और
इलेक्ट्रॉनिक बुक
में साठ हजार से अधिक पृष्ठों में
विस्तृत सांकेतिका के साथ
सम्पूर्ण गांधी वाङ्‌मय
संकलित है

यह सीडी प्रकाशन विभाग द्वारा 100 खंडों में प्रकाशित सम्पूर्ण गांधी वाङ्‌मय पर आधारित है।

मूल्य : 2000 रुपये

विक्रय और अन्य जानकारी के लिए संपर्क करें :

पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, ***नई दिल्ली***–*110019;* सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, ***नई दिल्ली***–*110001;* हॉल नं. 196, पुराना सचिवालय, ***दिल्ली***–*110054;* कामर्स हाउस, करीमभाई रोड बालार्ड पायर, ***मुंबई***–*400038;* 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, ***कोलकाता***–*700069;* राजाजी भवन, बेसेंट नगर, ***चेन्नई***–*600090;* बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, ***पटना***–*800004;* प्रेस रोड, निकट गवर्नमेण्ट प्रेस, ***तिरुअनंतपुरम***–*695001;* प्रथम तल, एफ विंग, केन्द्रीय सदन, कोरामंगला ***बंगलौर***–*560034;* अम्बिका कॉम्प्लैक्स, प्रथम तल, पाल्डी, ***अहमदाबाद***–*380007;* नवजन रोड, उजान बाजार, ***गुवाहाटी***–*781001;* 27 / 6, राम मोहन राय मार्ग, ***लखनऊ***–*226001;* ब्लॉक नं., 4, पहली मंजिल, ग्रुहाकल्पा कॉम्प्लैक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, ***हैदराबाद***–*500001;* 80, मालवीय नगर, ***भोपाल***–*462003;* सी.जी.ओ. काम्प्लैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, ***इंदौर;*** बी–7बी, भवानी सिंह मार्ग, ***जयपुर***–*302001*

पंचायतों के जरिये ग्रामीण विकास में महिलाओं की भूमिका

डा. अर्चना सिन्हा*

ग्रामीण विकास तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रम को सफल बनाने में पंचायतीराज की महत्वपूर्ण भूमिका है। संविधान के 73वें संशोधन के माध्यम से पंचायतों को अधिक स्वतंत्र और प्रभावशाली बनाया गया है तथा महिलाओं को एक तिहाई पद देकर उन्हें समानता देने का प्रयास किया गया है। लेकिन क्या पंचायतों में चुनकर आने के बाद राजनैतिक प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है? क्या वे पंचायतीराज की प्रशासनिक प्रक्रियाओं एवं 73वें संविधान संशोधन को समझ रही हैं? क्या पंचायतीराज अधिनियम, 1994 के कानूनी प्रावधानों की जानकारी उन्हें है और क्या वे उनमें रुचि ले रही हैं? ग्रामीण विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करने में उनकी भूमिका क्या है? प्रस्तुत है इन सवालों के जवाब तलाशने की कोशिश करता यह आलेख।

लोकतंत्र की निम्नतम इकाई पंचायत है और स्थानीय स्वशासन में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। पंचायतीराज भारत के लिए नई उपलब्धि नहीं है। प्राचीन काल से हमारे देश में इसकी सशक्त परंपरा रही है। स्वतंत्रता पूर्व से ही महात्मा गांधी ने पंचायतीराज व्यवस्था के माध्यम से पिछड़े वर्ग के हाथों में सत्ता सौंपने की कल्पना की थी। 1955 में पंचायतीराज व्यवस्था शुरू की गई लेकिन ये अपने कार्यों तथा उद्देश्यों को पूर्ण करने में असफल रही। सत्ता पिछड़े वर्गों के बजाय गांव के उच्च और खास वर्गों के हाथों में चली गई। कालांतर में सत्ता का विकेंद्रीकरण करके सही अर्थों में पिछड़े वर्ग को भागीदार बनाने का निश्चय किया गया। अप्रैल 1993 में 73वां और 74वां संविधान संशोधन विधेयक पारित करके और महिलाओं के लिए पंचायतों तथा नगर निकायों में एक तिहाई स्थान आरक्षित करके मूल स्तर पर

* वरिष्ठ कार्यक्रम अधिकारी, ग्रामीण विकास विभाग, भारतीय सामाजिक संस्थान, नई दिल्ली।

राजनैतिक सत्ता में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर दी गई।

भारतीय संविधान में पुरुषों और महिलाओं को समान दर्जा और अधिकार दिए जाने के बावजूद इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि विकास और सामाजिक स्तर की दृष्टि से महिलाएं अभी पुरुषों से काफी पीछे हैं। नारी विकास की मंजिल अभी कोसों दूर है। भारतीय समाज में महिला आज भी कमजोर वर्गों में शामिल है। विकास के अधिकतर प्रमुख क्षेत्रों में पुरुषों और महिलाओं की स्थित में भारी अंतर मौजूद है। इसी अंतर को कम करने के लिए हर वर्ष आठ मार्च को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाता है। इस सिलसिले को व्यापक रूप देने के लिए संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2000 को विश्व महिला वर्ष घोषित किया था। परंतु भारत ने इसे और अधिक महत्व देते हुए वर्ष 2001 को राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण वर्ष के रूप में मनाने का फैसला किया। इस दौरान सरकारी और गैरसरकारी स्तर पर महिलाओं को सशक्त और अधिकार संपन्न बनाने के लिए कई योजनाएं बनाई गईं।

भारत का संविधान और निर्वाचन के प्रावधान

स्वतंत्र भारत में महिलाओं की स्थिति को सुदृढ़ बनाने तथा सुधार अभियान को गतिशील बनाने का प्रथम अवसर संविधान के माध्यम से ही प्राप्त हुआ। प्रावधान के बावजूद महिलाओं की राजनैतिक सहभागिता बहुत ही निम्न है। विदित है कि 73वें संविधान संशोधन के अंतर्गत महिलाओं को पंचायतीराज संस्थाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण, सदस्य तथा अध्यक्ष पदों के लिए दिया गया है। इसके कारण पंचायतों में तीनों स्तरों– अर्थात् ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत/पंचायत समिति और जिला पंचायत में महिला प्रतिनिधियों की संख्या लगभग 11 लाख है। इनमें से लगभग 2.50 लाख महिलाएं अनुसूचित जाति व जनजाति की हैं। 73वें संशोधन में महिलाओं को अधिकार प्रदान करने की घोषणा पंचायतों के इतिहास में मील के पत्थर के समान है। पंचायतों में महिलाओं की सहभागिता अनिवार्य हो गई है, परंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि विधान बनाने मात्र से समाज में बदलाव नहीं लाया जा सकता है।

73वें संविधान संशोधन का परिणाम है कि पंचायतों में विभिन्न पदों पर 1,63,000 और सरपंच पद पर 10,000 महिलाएं सत्ता में शरीक हुईं। पुरुष प्रधान समाज में लंबे समय से उपेक्षा की शिकार तथा उन्हीं के निर्देशों पर चलने वाली उपेक्षित महिलाओं के लिए पंचायतों और स्थानीय निकायों में अपने लिए आरक्षित पदों के माध्यम से निर्वाचित होना एक सुखद आश्चर्य है। देश में एक तिहाई ग्राम पंचायतों, पंचायत समिति, जिला परिषद् नगर क्षेत्र समितियों, नगरपालिका आदि में शासन की बागडोर इन महिलाओं के हाथों में है। यह भूमिका उनके लिए नई है परंतु पंचायतीराज के आठ साल पूरे हो जाने के पश्चात भी इन प्रतिनिधियों में राजनैतिक चेतना का प्रसार तो हुआ है, पर जैसा कि सर्वेक्षणों से ज्ञात होता है कि ग्रामीण महिलाएं 'महिला समस्या' का अर्थ नहीं समझ पाई हैं। उनसे यदि उनकी समस्या के बारे में पूछा जाता है, तब उनका उत्तर सड़क, पानी, नाली, अस्पताल, मकान होता है। महिला विकास जैसा चिंतन उनके दिमाग में है ही नहीं। और यही महिलाओं के शोषण का कारण है।

वर्तमान स्थिति में समस्या के उन बिंदुओं को भी रेखांकित किया जाना चाहिए जो कि इस नवीन व्यवस्था में देखने को मिल रहे हैं। इसमें एक यह कि महिला के स्थान पर उसके पति बैठकों में जाते हैं। महिला प्रतिनिधियों के द्वारा मात्र अंगूठा कागज पर लगवा दिया जाता है। अभी हाल ही में सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली ने महिला राजनैतिक सशक्तीकरण दिवस मनाया था। इस आयोजन में यह तथ्य उभरकर सामने आया कि पंचायतीराज व्यवस्था में महिला जनप्रतिनिधियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के मामले चल रहे हैं। इसका प्रमुख कारण निरक्षरता है। उन्होंने तो केवल अंगूठा लगा दिया, यह जाने बिना कि वे किस प्रस्ताव पर अंगूठा लगा रही हैं। महिला सरपंचों एवं अन्य महिला पदाधिकारियों के पुरुष रिश्तेदारों के द्वारा उनके अधिकारों का दुरुपयोग किया जा रहा है।

पंचायत में निर्वाचित महिलाएं और ग्रामीण विकास

विकास को समझने के लिए अनेक सूचक विकसित किए गए हैं जिन्हें निम्नांकित रूप में व्यक्त किया जा सकता है– गुणात्मक और विस्तृत साक्षरता; उच्चस्तरीय संचार माध्यम; ग्रामीण क्षेत्र का औद्योगीकरण; प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि; व्यक्तियों की सभी सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक प्रक्रियाओं में संलग्नता।

पंचायतीराज व्यवस्था प्रारंभ की गई ग्रामीण विकास के उद्देश्य से। 2 अक्तूबर, 1959 को नागौर में पंचायतीराज की शुरुआत करते हुए पं जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, 'देश की सच्ची प्रगति तभी होगी जब गांव में रहने वाले लोगों में राजनैतिक चेतना आएगी। देश की प्रगति का सीधा संबंध गांव की प्रगति से है। यदि गांव उन्नति करेंगे तो भारत एक सबल राष्ट्र बन सकेगा और हमारी प्रगति को कोई रोक नहीं सकेगा। यदि आप अपने निश्चय से डिग जाएंगे तथा आपसी झगड़ों और दलबंदी में पड़ जाएंगे तो अपने उद्देश्य में कभी सफल नहीं होंगे। पंचायत में सभी को बराबर माना जाना चाहिए। स्त्री, पुरुष ऊंचे तथा नीचे का कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए, हमें एकता और भाईचारे की भावना से आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ना चाहिए।'

ग्रामीण विकास तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रम को सफल बनाने में पंचायतीराज महत्वपूर्ण रूप से सहायक रहा है। संविधान के 73वें संशोधन के माध्यम से पंचायतों को अधिक स्वतंत्र और प्रभावशाली बनाया गया है तथा महिलाओं को एक तिहाई पद देकर उन्हें समानता देने का प्रयास किया गया है। क्या पंचायतों में चुनकर आने के बाद राजनैतिक प्रक्रिया में उनकी भागीदारी बढ़ी है? क्या वह पंचायतीराज की प्रशासनिक प्रक्रियाओं एवं 73वें संविधान संशोधन को समझ रही हैं? क्या पंचायतीराज अधिनियम, 1994 के कानूनी प्रावधानों की जानकारी उन्हें है और क्या वे उसमें रुचि ले रही हैं? ग्रामीण विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करने में उनकी भूमिका क्या है? इन सवालों के जवाब तलाशने होंगे।

रुढ़िगत सोच

महिलाओं की बदतर स्थिति के लिए मूल रूप से बचपन से ही लड़कों तथा लड़कियों को संस्कार रूप में मिलने वाली सोच जिम्मेदार है। उसके बाद हमारी पारिवारिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक परंपराएं, मूल्य तथा रीतिरिवाज इस दृष्टिकोण को और पुष्ट करते रहते हैं। अतः इस सोच में बदलाव लाना नारी विकास की सबसे बड़ी चुनौती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारत में नियोजित विकास में महिला शिक्षा पर बल दिया जाता रहा है।

शिक्षा

यह सही है कि अब भी पुरुषों और महिलाओं की साक्षरता में काफी अंतर है। 2001 की जनगणना में पुरुष साक्षरता दर 76 प्रतिशत है जबकि महिला साक्षरता दर 54 प्रतिशत है। 1991 में महिला साक्षरता दर 39 प्रतिशत और पुरुष साक्षरता दर 64 प्रतिशत थी। इस प्रकार 10 वर्षों में पुरुष साक्षरता दर में 12 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई, तो महिला साक्षरता दर 15 प्रतिशत अधिक दर्ज की गई। 1951 की जनगणना में केवल 9 प्रतिशत महिलाएं साक्षर थीं।

1951 के मुकाबले इस उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद यह सच है कि आज भी 100 में 46 महिलाएं अनपढ़ हैं। अल्पसंख्यक समुदाय और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों में अनपढ़ औरतों की संख्या इससे भी अधिक है। इन सभी निरक्षर औरतों को साक्षर बनाने के लिए न केवल मौजूदा प्रयास जारी रखने होंगे बल्कि इनमें और तेजी लानी होगी। दलित और पिछड़े वर्गों में महिला शिक्षा प्रसार के विशेष उपाय करने की आवश्यकता है। शिक्षा से महिलाओं में आत्मविश्वास, अपने अधिकारों के बारे में जागरूकता तथा अन्याय से लड़ने की नैतिक शक्ति पैदा होती है। वे अपने प्रति हो रहे सामाजिक और आर्थिक भेदभाव को पहचान कर उसका प्रतिकार करने योग्य बन सकती हैं। हालांकि ऐसे अपराधों की रोकथाम के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं परंतु अशिक्षा और जागरूकता के अभाव में बहुत सी महिलाएं कानून द्वारा दी गई सुविधाओं का लाभ नहीं उठा पातीं।

घरेलू हिंसा

महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों का सबसे दुखद पहलू यह है कि उन्हें घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ता है। एक अध्ययन के अनुसार 40 प्रतिशत से अधिक भारतीय विवाहित महिलाएं घरेलू हिंसा झेलने को विवश हैं। इसलिए सरकार घरेलू हिंसा की रोकथाम के लिए नया कानून बना रही है। इसमें घरेलू हिंसा की परिभाषा करते हुए इस तरह की हिंसा के लिए दंड का प्रावधान किया गया है। 2001 की जनगणना के अनुसार 1,000 पुरुषों के मुकाबले 934 औरतें हैं जो 1991 के 921 के आंकड़े से तो ज्यादा हैं परंतु 1981 के 934 के अनुपात से कम हैं। चिंतनीय पक्ष यह है कि 1951 की जनगणना में यह अनुपात 972 था जो क्रमशः घटता हुआ अब 934 रह गया है। पुरुषों के मुकाबले औरतों की संख्या के इस असंतुलन को ठीक करना एक बहुत बड़ी चुनौती है। चंडीगढ़, पंजाब और हरियाणा में यह अनुपात क्रमशः 773, 874 और 861 है।

नारी शक्ति के उत्कर्ष का प्रयास

भारत के सामाजिक और आर्थिक ढांचे में शताब्दियों से कुछ वर्ग दबे, कुचले तथा शोषित रहे हैं जिनका शोषण सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक दृष्टि से शक्तिशाली वर्गों के लोगों द्वारा किया जाता रहा है। दलित तथा पिछड़ी कही जाने वाली जातियों के साथ–साथ भारतीय नारी को भी शोषितों के वर्ग में ही रखा जाना अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है। आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक रूप से सशक्त लोगों ने यदि अनुसूचित जातियों/जनजातियों तथा पिछड़ी जाति के लोगों का शोषण किया है तो संपूर्ण पुरुष वर्ग ने नारी को भोग की वस्तु समझकर एक सोची–समझी रणनीति के तहत उन्हें नैसर्गिक अधिकारों से वंचित करके वे सारे रास्ते बंद कर दिए जो बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त कर उन्हें आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक दृष्टि से अधिक सजग एवं स्वावलंबी बना सकते थे। महिलाओं के लिए स्थानीय स्वशासन में आरक्षण का प्रावधान बहुत सोच–समझकर किया गया कदम है। ग्रामीण समाज में महिलाएं काफी पिछड़ी हुई हैं और पुरुष उन पर हावी हैं, यद्यपि ग्रामीण अर्थतंत्र में महिलाओं का योगदान पुरुषों से कम नहीं है। पारित विधेयक में इस असंगति को दूर करने का प्रयास किया गया है। इससे महिलाओं में एक नई जागृति आएगी, उनमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न होगी, फलस्वरूप गांवों में नारी शक्ति का उत्कर्ष होगा।

प्रयास संतोषजनक नहीं रहे

अपने देश की राजनीति में महिलाओं की भागीदारी की अब तक की स्थिति का विश्लेषण करें तो कुल मिलाकर सत्ता में उनकी भागीदारी बढ़ाने हेतु किए गए प्रयासों को किसी भी परिस्थिति में संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। इसके कई आधार हैं :

- स्थानीय संस्थाओं में यह प्रयोग उन लोगों पर किया जा रहा है जो निरक्षर और निर्धन हैं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर हिंसा के शिकार हैं जिनका केवल 29 प्रतिशत आर्थिक कार्यों में संलग्न है तथा आर्थिक रूप से जिनकी सौदा करने की शक्ति अत्यंत कमजोर है।
- अनेक महिलाओं ने यह भय प्रकट किया है कि पंचायतों में उनकी भागीदारी से उनके घरेलू दायित्वों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, निर्धन महिलाओं को कार्य तथा मजदूरी की हानि उठानी पड़ेगी और इसकी क्षतिपूर्ति की व्यवस्था इस प्रणाली में नहीं है।
- निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों का भविष्य आज भी उनकी सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि से प्रभावित है। इसका कारण निम्न जाति की महिलाओं का उच्च जाति की महिला सदस्यों के साथ बैठने तथा उनकी इच्छा के विरुद्ध जाने में संकोच करना है।
- महिला पंचों तथा सरपंचों की प्रभावी भूमिका के विरुद्ध समाज का दबाव प्राचीन काल से ही रहा है। ग्रामीण समाज आज भी इस परंपरा को नहीं तोड़ सका है। अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं जिनमें मुखर महिला स्वरों को पुरुषों द्वारा दबा दिया गया है। वास्तव में आरक्षण की व्यवस्था

का दुरुपयोग पुरुष प्रधान समाज द्वारा ही किया जा रहा है। चुनाव मैदान में अधिकांशतः उन्हीं महिलाओं को उतारा गया है जो पुरुषों के अधीन रहकर तथा उनके मार्गदर्शन पर निर्भर रहकर कार्य करें।

- यह भी देखा गया है कि चुनाव क्षेत्रों का निर्धारण होने के पश्चात महिला उम्मीदवारों का चयन जाति के आधार पर किया जाता है। अनेक पढ़ी–लिखी तथा राजनीतिक रूप से जागरूक महिलाओं की यह शिकायत रही है कि नामांकन में उनकी उपेक्षा की गई अथवा उन्हें चुनावों में हराया गया। स्पष्टतः लोकतांत्रिक प्रक्रिया गांव स्तर पर अभी उन महिलाओं को स्वीकार करने में असमर्थ है जो शिक्षित एवं जागरूक हैं तथा जो पुरुषों की अधीनता में रहकर कार्य नहीं करना चाहतीं।
- पंचायतीराज में जाति पंचायतों की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है। जाति के बुजुर्ग जो अपनी जाति परंपराओं को सुरक्षित रखना चाहते हैं, अपनी जाति की उन महिला सदस्यों का उत्पीड़न कर सकते हैं जो सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध आवाज उठाती हैं। राज्य स्तर पर किए गए अनेक अध्ययनों से यह बात सामने आई है कि महिलाएं स्वतंत्र रूप से आवाज उठाने में असमर्थ रही हैं।
- यह भी देखा गया है कि पंचायतों के माध्यम से उनके ससुर, पति या अन्य पुरुष रिश्तेदार पंचायतों के कार्य में दखल देते हैं। इससे संविधान के इस प्रावधान की आत्मा का ही हनन होता है। इतना ही नहीं, महिलाओं में कार्य क्षमता की कमी भी पंचायती संस्थाओं के क्रियान्वयन में एक बड़ी बाधा बनकर उभरी है।
- यह भी देखा गया है कि पंचायत के पुरुष सदस्य महिला सदस्यों को बैठकों में नहीं बुलाते और उनके घर पर ही रजिस्टर पर हस्ताक्षर कराके उनकी उपस्थिति दर्ज करा लेते हैं।
- अनेक महिला प्रतिनिधियों ने भी यह स्वीकार किया है कि अपने गृह कार्यों को प्राथमिकता देने के कारण पंचायतों के क्रियाकलापों की जानकारी रखना उनके लिए मायने नहीं रखता। उनकी रुचि केवल पंचायत सदस्यों को मिलने वाले विशेषाधिकारों में ही अधिक रही है।
- यह धारणा है कि पंचायतों में महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित करना निरर्थक सिद्ध हुआ है। वे चुनकर तो आ गई हैं लेकिन उन्हें अपने विचार रखने का अधिकार नहीं है, वे वही करेंगी जो पुरुष चाहते हैं। अधिकांश महिलाएं अकुशल हैं, उन्हें पंचायतों के विषय में कोई जानकारी नहीं है। पत्नी के बदले उनके पति सब कार्य करते हैं, महिला सरपंच अपना हाथ उठाकर मौन स्वीकृति देती है। गांव में महिलाएं अभी भी घूंघट निकालकर चलती हैं, बैठक में पत्नी के साथ आया पति बोलता है। पंचायत सदस्या, अशिक्षित होने के कारण से अपने अधिकार और दायित्वों को नहीं जान पाती हैं।

शिक्षण–प्रशिक्षण

पंचायतीराज में महिलाओं की भूमिका के संबंध में तीन बातों की ओर ध्यान आकर्षित करना आवश्यक है। सबसे पहले शिक्षा और प्रशिक्षण है। शिक्षा का अभाव उनके आत्म–विकास और आत्म–सम्मान में सबसे बड़ी बाधा रही है। यद्यपि सरकार के प्रयासों के फलस्वरूप पिछले पांच दशकों में महिला साक्षरता कई गुना बढ़ी है फिर भी अभी उनमें शिक्षा का स्तर निम्न है। देश की संपूर्ण महिलाओं का 74 प्रतिशत भाग गांवों में बसता है लेकिन लगभग 18 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं ही शिक्षित हैं। इसके अनेक कारण रहे हैं यथा, महिला शिक्षा के प्रति जनजागरण की कमी, बालिकाओं पर घरेलू कार्यों की जिम्मेदारी होने के कारण स्कूल में नामांकन का अभाव, अल्पायु में विवाह आदि।

अतः पंचायतों का प्रमुख और प्रथम दायित्व शिक्षा और प्रशिक्षण का है। महिलाओं को उनके अधिकारों तथा दायित्वों का समुचित ज्ञान दिलाया जाए ताकि वे इन अवसरों का समुचित लाभ उठा सकें। ग्राम पंचायतों में निर्वाचित महिलाओं के लिए स्थानीय प्रशिक्षण शिविर लगाकर उन्हें विकास के विविध पहलुओं से परिचित कराया जाए तथा उन्हें उनके अधिकारों और कर्तव्यों की जानकारी दी जाए ताकि वे पुरुषों के साथ कदम मिलाकर चल पाएं तथा राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में जुड़ सकें।

अनुसूचित जाति/जनजाति और महिला प्रतिनिधियों के प्रशिक्षण को विशेष रूप से प्राथमिकता दी जानी चाहिए। शिक्षा से ही उन्हें योग्यता, सामर्थ्य और साहस मिल सकेगा। वे यह जान सकेंगी कि कैसे जिम्मेदार पदों पर रहकर नीति का निर्धारण एवं क्रियान्वयन किया जा सकता है। पंचायतों द्वारा महिला अधिकारियों के प्रशिक्षण की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए ताकि वे कार्यालय की व्यवस्था में भी दक्ष हो सकें। शिक्षा व्यक्ति को उचित कार्य उचित स्थान पर उचित तरीके से करना सिखाती है।

आर्थिक स्वतंत्रता

दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता है। वर्तमान में ग्रामीण परिवारों में सबसे अधिक श्रम महिलाओं को ही करना पड़ता है परंतु उनका श्रम पूर्णतः अवैतनिक होता है। सुबह से देर रात तक घर और खेती के कार्यों में जूझती महिला के श्रम का अधिकांश फल पुरुष वर्ग ही भोगता है। पति पर आश्रित रहने की प्रथा ने महिलाओं की आत्मचेतना को आच्छादित कर रखा है। आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं के श्रम का उचित मूल्यांकन हो ताकि उनके श्रम का सही प्रतिफल उन्हें मिल सके।

स्वास्थ्य

पंचायत के क्रियाकलापों की तीसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता स्वास्थ्य है। यद्यपि सरकार ने स्वास्थ्य सुविधाओं का पर्याप्त प्रसार किया है, परंतु अशिक्षा, परंपरावादी विचारों एवं जागरूकता की कमी के कारण जच्चा मृत्युदर अभी भी प्रति लाख जीवित जन्मों पर पांच सौ आंकी गई है। बिहार, मध्य प्रदेश, असम और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में यह दर हजारों की संख्या में है। इसको कम करने का भरसक प्रयास करना होगा तथा महिलाओं को आगे आकर स्वयं अपना उद्धार करना होगा।

निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की पंचायती राज में सक्रिय भूमिका हेतु परिवार की भूमिका पर विचार करना होगा। जाति और वर्ग से परे एक संस्था के रूप में परिवार शक्ति, सत्ता एवं संसाधनों का आवंटन पक्षपातपूर्ण तरीके से करता है। यह महिलाओं के हित में नहीं होता। यदि परिवार के स्तर पर महिलाओं की इस नई भूमिका का स्वागत नहीं किया गया तो पारिवारिक तनाव उत्पन्न हो सकते हैं।

त्रिस्तरीय पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी निर्धारित करना ही समय की मांग नहीं है बल्कि सत्ता के सभी स्तरों पर आधा दायित्व उन्हें सौपना होगा, आर्थिक, प्रशासनिक, न्यायिक तथा विकास क्षेत्रों में उनकी 50 प्रतिशत भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु सभी स्तरों पर व्यापक प्रयास करने होंगे तथा नीति निर्धारण से लेकर क्रियान्वयन तक के विभिन्न पहलुओं पर निष्ठापूर्वक अमल करके ही इस चुनौती का सही प्रकार से सामना किया जा सकता है।

जो महिलाएं स्वजनों के साथ बैठकों में जाती हैं, एक अध्ययन में उनसे यह जानकारी मिली कि उनके साथ में चलने वाले व्यक्ति उन्हें जहां बताते हैं वहां वे हस्ताक्षर या अंगूठा लगा देती है। वे वहां मूक दर्शक होकर बैठी रहती हैं। वे स्वतंत्र रूप से कार्य निर्वहन में सक्षम नहीं हैं और पुरुषों पर निर्भर हैं। ये अंगूठा छाप महिलाएं निर्णय नहीं ले पाती हैं और कठपुतली बनकर रह जाती हैं। निर्वाचित महिलाओं के उन पदों पर उनके परिवार के सदस्य यथा पति, भाई, पिता, स्वसुर ज्यादा अधिकार समझते हैं और औपचारिक बैठकों में ग्रामीण समाज के ये प्रभावशाली लोग महिला प्रतिनिधियों के माध्यम से अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। महिला आरक्षण का लाभ तभी मिल पाएगा जब महिलाएं न केवल बैठकों में जाएं बल्कि बैठकों की कार्यवाही में भी भाग लें, अपने विचार प्रकट करें और लिए गए निर्णयों के कार्यान्वयन में सक्रिय भूमिका अदा करें।

एक सर्वेक्षण के दौरान महिला पंचायत प्रतिनिधियों से जब यह पूछा गया कि क्या वे पंचायत का अगला चुनाव लड़ना चाहती हैं, तब यह तथ्य सामने आया कि आधे से अधिक उत्तरदाताओं को इस बारे में कुछ पता नहीं है। अगर परिवार के सदस्य चाहेंगे तो वे लड़ लेंगी। उनकी अशिक्षा, संकुचित मानसिकता तथा पूर्णतः पुरुष पर निर्भर रहने के कारण स्वचेतना का अभाव यहां दिखाई देता है। अपने अधिकारों के लिए इच्छा शक्ति तथा संघर्ष के अभाव में वे पुरुषों के निर्णय को अधिक मान्यता देती हैं। उन्होंने यह स्वीकार किया कि चूंकि सरकार ने महिला सीट कर दी है इसलिए हमें खड़ा किया गया था। हमारा राजनीति में कोई कार्य नहीं है, कार्य पुरुष देखते हैं। हम तो खेतों में काम करती हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि अधिकतर महिलाएं स्वतंत्रता और स्वेच्छा से पंचायत का कार्य एवं ग्रामीण विकास करने में असमर्थ प्रतीत होती हैं। राजनैतिक हस्तक्षेप और स्वास्थ्य प्रेरित दृष्टिकोण के कारण भी महिलाओं की अपर्याप्त सहभागिता रही है लेकिन इसके साथ ही महिलाएं यह भी विश्वास करती हैं कि आरक्षण की इस व्यवस्था से महिलाओं की विभिन्न समस्याओं के निराकरण हेतु एक मौन क्रांति का प्रारंभ हो गया है। आने वाले वर्षों में निश्चय ही परिवर्तन आएगा। स्थानीय स्तर पर जो बाधाएं आ रही हैं उनका समाधान वे शिक्षा प्राप्त करके ग्रामीण विकास में योगदान देकर सकेंगी।

भारतीय संविधान में पुरुषों और महिलाओं को समान दर्जा और अधिकार दिए जाने के बावजूद इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि विकास और सामाजिक स्तर की दृष्टि से महिलाएं अभी पुरुषों से काफी पीछे हैं। भारतीय समाज में महिला आज भी कमजोर वर्गों में शामिल हैं।

महिलाओं के लिए आरक्षण की घोषणा की प्रारंभिक प्रतिक्रिया एक तरफ उल्लास प्रदान करने वाली थी, तो दूसरी तरफ घबराहट और चिंता वाली भी। सबसे बड़ी समस्या, पंचायत के तीनों स्तरों के लिए चुनाव के समय तक 7.95 लाख महिलाओं को खोजने की थी। ऐसी परिस्थिति में पुरुष प्रधान समाज में महिलाएं पुरुषों के आदेश, निरीक्षण तथा प्रतिनिधि के रूप में कोरे कागज पर अपने हस्ताक्षर की करेंगी या अंगूठा लगाएंगी, परिणामतः महिलाएं कानून के दलदल में फंसती चली जाएंगी।

पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी कितनी कारगर, कितनी सार्थक

पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी को महत्वपूर्ण माना गया है। चूंकि महिलाओं को घरेलू बच्चों, पोषण इत्यादि विषयों से जुड़ी समस्याओं की अच्छी समझ होती है, अतः उनकी भागीदारी से विकास कार्यों में व्यापकता आने का अनुमान है। कुछ लोगों का यह भी मानना है कि महिलाएं अपने उद्देश्यों के प्रति पुरुषों की अपेक्षा अधिक ईमानदार, उत्साही और प्रतिबद्ध होती हैं।

ऐसा माना गया है कि आरक्षण महिलाओं को निर्वाचित प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने का अवसर प्रदान करेगा। वे यह जानेंगी कि सार्वजनिक जीवन में कैसे कार्य किया जाता है, कैसे समस्याएं सुलझाई जाती हैं तथा कैसे कठिन परिस्थितियों का सामना किया जाता है। यह उनके लिए एक अच्छा धरातल होगा जिससे वे भविष्य में बृहत्तर भूमिका के लिए तैयार हो सकेंगी। इस आस्था के बावजूद इस बारे में संशय बहुत था कि महिलाओं की पंचायतों में भागीदारी से फायदा होगा या नहीं। अतः इस मुद्दे को गांवों में जाकर समझना आवश्यक हो जाता है। एक अध्ययन में राजस्थान तथा हरियाणा के क्रमशः अलवर तथा गुड़गांव जिलों की आठ ग्राम पंचायतों, चार पंचायत समितियों तथा दो जिला परिषदों के चुने हुए कुल 139 निर्वाचित प्रतिनिधियों, 40 गैर प्रतिनिधियों (आम ग्रामीण) तथा 31 पंचायत कर्मचारियों से साक्षात्कार द्वारा यह पता लगाने का प्रयास किया गया कि पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से लोगों को

तालिका 1

पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से होने वाले लाभ

लाभ	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)	कर्मचारी (प्रतिशत)
1. विचार व्यक्त करने का अवसर	36	64	71
2. घर से बाहर की जानकारी में वृद्धि	27	52	58
3. आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान में वृद्धि	30	39	58
4. विकास मुद्दों का व्यापक होना	11	25	39
5. कोई लाभ नहीं	43	18	16

क्या–क्या लाभ और क्या कठिनाइयां महसूस हो रही हैं।

पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से लाभ

महिलाओं के मुद्दे पर निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा गैर प्रतिनिधियों के विचारों में दोनों ही जिलों में विशेष अंतर नहीं था। अतः प्रस्तुतीकरण को सरल बनाने के उद्देश्य से केवल महिला एवं पुरुष प्रतिनिधियों (दोनों जिलों के प्रतिनिधि एवं गैर प्रतिनिधि संयुक्त रूप से) के विचारों में विद्यमान भिन्नता पर ही ध्यान केंद्रित किया गया है। पंचायत कर्मचारी जो कि सरकारी प्रतिनिधि होते हैं, एक बाहरी व्यक्ति के रूप में महत्वपूर्ण जानकारी दे सकते हैं अतः उनके विचारों पर भी गौर किया गया। तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि लगभग एक तिहाई पुरुषों एवं दो तिहाई महिलाओं तथा कर्मचारियों का मानना था कि पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण दिए जाने से उनको भी विकास प्रक्रिया में अपने विचार व्यक्त करने का अवसर मिला है। लगभग आधी महिलाओं एवं कर्मचारियों तथा एक चौथाई पुरुषों ने बताया कि आरक्षण द्वारा पंचायतों में पहुंच जाने से महिलाओं में घर से बाहर की जानकारी बढ़ रही है, उनमें समझदारी बढ़ रही है। पंचायत की बैठकों में उन्हें विकास कार्यक्रमों की जानकारी मिलती है।

एक तिहाई पुरुषों एवं महिलाओं तथा आधे से अधिक कर्मचारियों से यह मालूम हुआ कि पंचायतों में आने से महिलाओं का आत्मसम्मान और आत्मविश्वास बढ़ा है, हालांकि अभी बहुत कम महिलाएं ही सक्रिय रूप से पहल कर रही हैं। कुछ लोगों का यह भी विचार था कि आरक्षण द्वारा महिलाओं के पंचायतों में आने से विकास के मुद्दों में व्यापकता आई है। उनका कहना था कि चूंकि बहुत से मामलों (जैसे घर संबंधी मामले) को महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा बेहतर समझती हैं और उनका ध्यान इन मुद्दों पर अधिक रहता है। अतः महिलाओं के आने से इन पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। ऐसा विचार व्यक्त करने वाले अधिकतर पढ़े–लिखे लोग थे। यहां पर एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि लगभग 50 प्रतिशत पुरुषों का मानना था कि आरक्षण द्वारा पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से कोई विशेष लाभ नहीं हुआ है। इन लोगों का कहना था कि पंचायतों में अधिकतर महिलाएं निष्क्रिय रहती हैं, ग्रामीण समाज में महिलाओं को विकास संबंधी कार्यों की कोई समझ नहीं होती है और वे जो कुछ मीटिंग में बोलती भी हैं वह वही होता है जो उनके घर वाले बता कर भेजते हैं। अतः उनके पंचायतों में चुने जाने से पंचायतों में उनकी संख्या तो बढ़ गई है किंतु इससे कोई लाभ नहीं हुआ है। अधिकतर महिलाएं तथा पंचायत कर्मचारी इस विचार से सहमत नहीं थे।

महिला प्रतिनिधियों की समस्याएं

लगभग आधे पुरुषों तथा एक चौथाई महिलाओं एवं कर्मचारियों का मानना था कि पंचायत गतिविधियों में समय देने के कारण घरेलू कार्य की उपेक्षा हो रही है (तालिका 2)। कुछ लोगों का मानना था कि बहुत से गरीब परिवारों में महिलाएं भी आर्थिक गतिविधियों में हाथ बंटाती हैं, अब आरक्षण द्वारा उनके पंचायतों में चुने जाने से ऐसे परिवारों की आर्थिक गतिविधियों में कमी आई है।

जागरूकता की कमी : गांव का विकास संभव है, जब पंचायत के प्रतिनिधियों और पदाधिकारियों को विकास संबंधी उठाए जाने वाले कदमों की जानकारी हो।

अशिक्षित या अल्पशिक्षित : ग्रामीण महिलाओं का गरीबी रेखा से नीचे रहना भी समस्या है। मध्य प्रदेश में एक सर्वेक्षण के अनुसार पंचायतों में चुनकर आईं 57 प्रतिशत महिला गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों से हैं।

जातिगत भेदभाव : दलित वर्ग की महिला प्रतिनिधियों की गांव में कोई सुनना नहीं चाहता। गांव में उच्च वर्ग के लोगों का ही प्रभाव रहता है। सरकारी अधिकारी भी उनके यहां न आकर जमींदारों के यहां जाते हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार मध्य प्रदेश की गुड़िया बाई दलित सरपंच की लोगों ने तब पिटाई

तालिका 2

पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से उत्पन्न होने वाली कठिनाइयां

कठिनाइयां	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)	कर्मचारी (प्रतिशत)
1. घरेलू कार्य की उपेक्षा	51	27	26
2. गरीब परिवारों में आर्थिक गतिविधियों में कमी	37	25	26
3. महिला होने का अनुचित लाभ उठाना	39	0	22
4. पुरुषों के लिए पंचायती कार्य के अवसरों में कमी	7	0	0
5. पंचायत में विवादों में बढ़ोतरी	30	18	29
6. कोई कठिनाई नहीं	22	48	58

कर दी और उनका घर जला दिया जब उन्होंने वर्ष 1977 में स्वतंत्रता दिवस पर तिरंगा झंडा फहराने की कोशिश की।

दलित महिलाओं को संवैधानिक कार्य नहीं करने दिए जाते। उन्हें धमकियां दी जाती हैं। मध्य प्रदेश के बड़गोदा, तहसील महू, जिला इंदौर की महिला सरपंच पुन्नी बाई को जाट जाति के लोग धमकियां देते हैं, अपशब्दों का प्रयोग करते हैं तथा जान से मारने की धमकी देते हैं क्योंकि उपसरपंच जाट जाति का है और वह पंचायत का कोई भी कार्य नहीं करने देना चाहता जिससे पंचायत कोई भी निर्णय लेने में असमर्थ है।

संबंधों से जुड़ा होना : पुरुष प्रधान समाज वर्चस्व को बनाए रखने के लिए संबंधों का उपयोग कर रहा है। महिला सरपंच की खुद की कोई राय नहीं है। मध्य प्रदेश में तो कुछ शब्दों का चलन आम हो गया है जैसे 'सरपंच पति' 'सरपंच पुत्र'। शाजापुर जिले के मोमन बड़ोदिया विकास खंड की सिमरोल ग्राम पंचायत में लेटरहैड पर सरपंच श्रीमती रामप्यारी बाई पवार के नाम के नीचे कोष्ठक में लिखा गया है। 'पुत्र – विष्णु प्रसाद पवार।' इतना ही नहीं, पंचायत ने एक प्रेस विज्ञप्ति में कहा कि 30 मई को आंधी और वर्षा से क्षतिग्रस्त गांव की प्राथमिक शाला का सरपंच पुत्र ने मुआयना किया। उन्होंने पंचनामा बनवाया और यह विज्ञप्ति भी सरपंच पुत्र ने अपने हस्ताक्षर से जारी की।

भ्रष्टाचार : पहले से व्यापक रूप से फैले भ्रष्टाचार के कारण भी महिलाएं कार्य करने में असमर्थ हैं। उनका कहना है कि कोई भी फाइल बिना हिस्सा दिए आगे नहीं बढ़ती जिससे ग्राम विकास में अड़चन आती है।

चरित्र हनन : गांव की रुढ़िवादी नीतियों के कारण भी प्रतिनिधि कार्य करने में असमर्थ हैं। महिलाएं घर से बाहर निकलकर ग्रामीण विकास का कार्य करती हैं तो समाज उनके चरित्र पर उंगली उठाकर, उन्हें हतोत्साहित करता है। मध्य प्रदेश के जिला बैतूल ग्राम पंचायत बोरगांव के गांव इटिया उर्फ बिटिया निवासी अनुसूचित जनजाति की महिला पंच कुनबी बाई को जूते–चप्पलों का हार पहनाकर तथा बैलों के गले में बंधनेवाली घंटी कमर में बांधकर उसे हाथों को पीठ के पीछे बांधकर, सार्वजनिक रूप से बिटिया तथा बोरगांव में घुमाया गया। कारण बताया गया कि वह वासुदेव नाम के पुरुष के साथ गांव से बाहर गई थी। उनके पति एवं घर के अन्य सदस्यों ने उन्हें यह दंड इसलिए दिया कि सामाजिक मर्यादा बनाए रखने के लिए इस प्रकार का दंड देने का विधान है।

अविश्वास प्रस्ताव : पंचायत का पुरुष वर्ग तथा गांव का पुरुष वर्ग यह नहीं चाहता कि महिला प्रधान हो। अतः बिना किसी कारण के अविश्वास प्रस्ताव लाकर उन्हें हटा देना चाहते हैं। इसके लिए उन्हें भ्रष्टाचार के मामलों में फंसाया जाता है। जैसा कि विदित है कि चंदेली ग्राम पंचायत की सरपंच सुनीता बाई देशराज मीणा को पंचायत निधि से 1.5 लाख की धनराशि का घोटाला करने का दोषी पाया गया। अपनी रिपोर्ट में एसडीएम राजेश तिवारी ने लिखा कि सुनीता बाई स्वयं पंचायत का कोई काम नहीं देखती। उसके स्थान पर उसका पति सरपंच के रूप में काम करता है। इस घोटाले में अन्य पंचायत सदस्य भी शामिल थे।

राजनैतिक हस्तक्षेप और स्वास्थ्य प्रेरित दृष्टिकोण के कारण भी महिलाओं की अपर्याप्त सहभागिता रही है लेकिन इसके साथ ही महिलाएं यह भी विश्वास करती हैं कि आरक्षण की इस व्यवस्था से महिलाओं की विभिन्न समस्याओं के निराकरण हेतु एक मौन क्रांति प्रारंभ हो गई है। आने वाले वर्षों में निश्चय ही परिवर्तन आएगा। स्थानीय स्तर पर जो बाधाएं आ रही हैं उनका समाधान वे शिक्षा प्राप्त करके ग्रामीण विकास में योगदान देकर सकेंगी।

अधिकारों के प्रति अनभिज्ञता : अधिकार प्राप्ति के पश्चात भी महिलाएं उन्हें उपयोग करना नहीं जानतीं क्योंकि पंचायतीराज की कार्यप्रणाली से वे अनजान होती हैं।

सामंतों का वर्चस्व : दिल्ली – उत्तर प्रदेश बार्डर पर स्थित एक ग्राम पंचायत में एक व्यक्ति से बातचीत करने से बड़ा अचंभा हुआ। उसने बताया कि 73वें संशोधन के बाद उनके यहां की पंचायत में सरपंच का पद अनुसूचित जाति की महिला के लिए आरक्षित हो गया। तब उन्होंने इस वर्ग की एक महिला को चुना और उसको चुनाव में जिताया। चुनाव जीतने के बाद वह महिला उनके सामने सर झुकाए खड़ी रहती है। उनके सामने सरपंच की कुर्सी पर भी नहीं बैठती। वह नीचे बैठती है। हालांकि यह महिला शिक्षित है और हस्ताक्षर करना जानती है पर उसे जैसा कहा जाता है वैसा ही करती है।

महिला प्रतिनिधियों की उपलब्धियां

स्थिति में सुधार : पंचायतीराज व्यवस्था से महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है, यह भी सच है। उन्होंने अपनी शक्ति को पहचाना है।

राजनैतिक चेतना जगी है : पंचायत में महिला प्रतिनिधित्व के आ जाने से ग्रामीण महिलाओं में राजनैतिक चेतना का प्रसार हुआ है। जब महिलाएं ही महिलाओं का चुनाव करेंगी तो निश्चित रूप से उनमें इस भावना का संचार होगा कि एक दिन वह भी चुनी जा सकती हैं। जब उनमें चुनाव के संबंध में चेतना उत्पन्न होगी तो निःसंदेह वे इस बात पर ध्यान देंगी कि कौन सी महिला उनका सही प्रतिनिधित्व करेगी। अतः प्रतिनिधित्व वास्तविक और सही होगा।

आत्मसम्मान बढ़ा है : हरियाणा के भिवानी जिले में लोहाक ब्लाक के अमीरदास गांव में सर्वप्रथम महिला पंचायत चुनकर गांववालों ने सदियों पुरानी पुरुष प्रधान राजनैतिक प्रणाली को एक गंभीर चुनौती दी है। गांव के बुजुर्ग लोगों का कहना है कि महिलाओं को सत्ता में

शत–प्रतिशत हिस्सा देकर हम देश के नेताओं को दिखा देना चाहते हैं कि केवल ऊंची–ऊंची बातें करने से महिलाओं का मुकद्दर नहीं बदला जा सकता। अगर महिलाओं का उत्थान चाहते हैं तो उन्हें अधिकार सौंपे जाएं और उन्हें निर्णय प्रक्रिया में भागीदार बनाया जाए।

शोषण के विरुद्ध जागृति : राजगढ़ मध्य प्रदेश के खजूरिया ग्राम पंचायत की सरपंच सरजू बाई उन महिला प्रतिनिधियों में से हैं, जिन्होंने बाल विवाह को रोकने के लिए कड़े कदम उठाए और इस कुरीति को हमेशा के लिए खत्म किया।

इटारसी के सोनासांवरी गांव की सरपंच केसरबाई ने गांव में रह रहे गुंडों द्वारा महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ जेहाद छेड़कर उन्हें जेल की हवा खिलाई।

सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ी है : महिला सरपंचों का परिवेश ज्ञान, प्रशासनिक कार्यों में भागीदारी तथा अन्य संस्थाओं से संपर्क निरंतर बढ़ रहा है। उन्होंने खुलकर बोलना शुरू कर दिया है। इससे परदा प्रथा थमी है।

निर्णय की क्षमता में इजाफा : पुरुष प्रधान समाज की मानसिकता के तमाम दबावों के बावजूद राजस्थान के अलवर जिले के निम्मो गांव की सरपंच कोयल देवी ने अपने ही पति और ससुर को अधिसूचना जारी कर पूछा कि पंचायत की जमीन हड़पने की वजह से उनके विरुद्ध कार्यवाही क्यों न की जाए।

कार्यपद्धति में खुलापन : महिला प्रतिनिधित्व के कारण सार्वजनिक विषयों तथा निर्णयों पर विचार–विमर्श का दायरा रसोईघर तक पहुंच गया है। जबकि पहले ये चौपालों तक ही सीमित था। सार्वजनिक मामलों में पुरुषों की जोड़–तोड़ को महिलाएं समझ नहीं पा रही हैं और वे उसे गोपनीय भी नहीं रख पाती हैं। फलस्वरूप कार्य प्रणाली में स्पष्टवादिता तथा खुलापन पहले की तुलना में अधिक है। इससे भ्रष्टाचार के अवसर भी कम हो रहे हैं।

महिला बनाम सत्ता ; अध्ययन से प्राप्त तथ्य

मध्य प्रदेश के उमरिया जिले के आठ गांवों तथा मंदसौर के चार गांवों का दौरा करने पर पता चला कि यहां रहने वाले कोल, गोंड, बैगा, भील आदिवासियों को अपने अधिकारों की जानकारी ही नहीं है। उमरिया जिले की विरुहलिया पंचायत की दुखिया बाई के जाली हस्ताक्षर करवा कर सचिव ने जवाहर राहत योजना की राशि निकाल ली। सरपंच दुखियाबाई बैगा जाति की महिला है, जिसका पति अंधा है। सचिव ने एक बार 60,000 रुपये निकाले तो दूसरी बार यह संख्या 70,000 तक जा पहुंची। सरपंच के पास बैंक की पासबुक तक नहीं है। ये सारे पैसे हजम कर सचिव वहां से फरार हो गया। उधर दलित महिला सरपंच को इस चक्रव्यूह में उलझाकर सरकारी अधिकारी चैन की सांस लेते हुए कहते हैं कि यह सब महिला की अज्ञानता और पिछड़ेपन का द्योतक है। जाहिर है तिकड़म के इस खेल में अंततः वह सरपंच ही दोषी करार दी गई।

महिला शक्ति को देखकर ही उन पर अंकुश लगा प्रारंभ हुए जो आज भी जारी हैं। महिला को अधिकार तो दिए गए परंतु सब कहने के लिए। वास्तविकता कुछ और है। मध्य प्रदेश में पंचायतों एवं जनपद पंचायतों में 19 अध्यक्ष हैं, परंतु क्या सभी महिलाएं अपना कार्य स्वतंत्र रूप से कर पा रही हैं? गुना जिले के धनारिया गांव के करणसिंह धाकड़ के बड़े लड़के कन्हैया ने दलित महिला सरपंच को सार्वजनिक कुंए से पानी भरने से रोका और ऐसा न मानने पर मारपीट की।

अरुणा राय, जो किसान मजदूर संगठन से जुड़ी हैं, ने राजस्थान के अपने अनुभव बताते हुए कहा कि जन सुनवाई के दौरान अनेक सरपंचों ने घोटाले में जो पैसा गबन किया था, वह वापस किया। जो महिला तथा पुरुष पंचायतों के सदस्य तथा सरपंच बन गए उनके सोचने का ढंग ही बदल गया। वे जो पहले पंचायतों से हिसाब मांगते थे, अब खुद हिसाब नहीं देते। उड़ीसा में सुंदरगढ़ जिले के कुतरा पंचायत की एक महिला उपसरपंच बासमती बारा ने यह शिकायत की कि पंचायत मंत्री ने उनके साथ दुर्व्यवहार किया। अनेक स्थानों पर महिला प्रतिनिधियों की जागरूकता दिखाने या अधिकारों के प्रति उत्सुकता दिखाने के कारण प्रताड़नाओं और अपशब्दों का सामना करना पड़ता है। हरियाणा के कच्छरली गांव (पानीपत के पास) में दलित महिला सदस्य जिंदन बाई जब एक जमीन के सौदे के बारे में पूछताछ कर रही थीं तो उन्हें पुलिस की मार तथा गालियां मिलीं। मध्य प्रदेश में भिंड जिले के हरपुरा गांव में एक महिला के दोनों हाथ तोड़ दिए गए थे। राजस्थान के जयपुर जिले के बस्ती ब्लाक की साथिन भंवरी देवी के साथ सामूहिक बलात्कार किया गया। सलहौना गांव की द्रौपदी बाई को सरइया बीडीओ जिला रायगढ़ के सामने निर्वस्त्र किया गया। मध्य प्रदेश में 1,350 से अधिक महिलाएं भ्रष्टाचार के विभिन्न मामलों में घिरी हुई हैं। उन्होंने केवल अंगूठा लगा दिया और भ्रष्टाचार के मामले में फंस गईं। वास्तविकता यह है कि स्वार्थ अपना हो या पराया, परिणाम महिला प्रतिनिधियों को ही भुगतना पड़ रहा है। राजनीति के गलियारे से होती हुई उनके न्यायालयों की चौखटों और जेल में उनके पहुंचने का खतरा बढ़ रहा है।

महिला प्रतिनिधि के शोषण को रोकने के लिए आवश्यक है कि उनके व्यक्तित्व को निखारा जाए, उनका चहुंमुखी विकास करके कानूनों के बारे में उनका ज्ञान बढ़ाया जाए। एक पक्ष कहता है कि महिला प्रतिनिधियों को भ्रष्टाचार में फंसाया जा रहा है, जबकि दूसरा पक्ष यह कहता है कि महिला प्रतिनिधि अपने व्यक्तित्व में कमी के कारण भ्रष्टाचार में फंस रही हैं। किंतु निष्कर्ष यही आता है कि ये महिलाएं कठघरे में खड़ी हैं।

नई चेतना

जाहिर है कि हमारी नीतियों, कार्यक्रमों और कानूनों के क्रियान्वयन में कहीं कमी है, तभी तो इस तरह का असंतुलन बना हुआ है। यह कमी दो तरह से दूर की जा सकती है। एक, निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने और दूसरे, पुरुषों की रूढ़िगत सोच में बदलाव लाने से। पहला उपाय पंचायतों और नगर पालिकाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत स्थान आरक्षित करने के कानून के माध्यम से सफलतापूर्वक आजमाया जा चुका है। बहुत सी पंचायतों में महिलाओं ने अपनी जिम्मेदारी बखूबी निभाकर दिखा दिया है कि अवसर मिलने पर वे किसी से कम

सिद्ध नहीं होंगी। परंतु जहां पुरुष शासित व्यवस्था और सोच ने महिलाओं को काम नहीं करने दिया वहां वे सफल नहीं हो पाईं।

परिवर्तन मात्र शिक्षा के प्रसार से संभव नहीं है। इसके लिए हर स्तर पर नई चेतना पैदा करने की जरूरत है। इसके लिए स्वयंसेवी संगठन, बुद्धिजीवी वर्ग, संस्कृतिकर्मी, पत्रकार और मीडियाकर्मी तथा सरकार को मिलजुल कर प्रयास करने होंगे। यह कार्य केवल महिला संगठनों और उनके कार्यकर्ताओं के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता।

समाधान

- पंचायतीराज की सफलता के लिए जागरूकता एक महत्वपूर्ण शर्त है। महिलाओं को उनके अधिकार, शक्तियां और कर्तव्यों के बारे में प्रशिक्षण देना अनिवार्य है। महिला जन प्रतिनिधियों के लिए ग्रामीण स्तर पर प्रशिक्षण केंद्र लगाकर इन्हें विकास के विभिन्न पहलुओं से भी परिचित कराया जाना चाहिए। उन्हें उनकी क्षेत्रीय भाषा में ही प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिससे महिलाएं जल्दी समझ सकें। प्रशिक्षण छोटे–छोटे समूहों में देना चाहिए जिससे प्रत्येक महिला पर प्रशिक्षक उचित समय दे सके।
- चूंकि पंचायत प्रतिनिधि पढ़ने–लिखने की सामान्य अवस्था पास कर चुके हैं अतः उनके स्तर पर ही शिक्षण–प्रशिक्षण देना चाहिए इसके लिए स्थानीय महिला प्रशिक्षिका आवश्यक है।
- पंचायत प्रतिनिधि अधिकतर काम करने वाले हैं। अतः प्रशिक्षण देते समय इस बात का ध्यान रखना होगा कि इस प्रशिक्षण से उनके जीविकोपार्जन में किसी प्रकार का व्यवधान न आए।
- बाल विवाह पर रोक हो जिससे बालिकाओं को पूर्ण व्यक्तित्व विकास का अवसर मिल सके।
- हाईस्कूल से ऊपर की बालिकाओं को व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाए।
- निर्धनता निवारण कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाई जाए।
- महिला विकास कोष से अधिक ऋण दिया जाए।
- राष्ट्रीय महिला कोष का प्रचार–प्रसार किया जाए।
- ऐसे परिवारों की पहचान की जाए जिनकी मुखिया महिलाएं हों तथा जिनके पास रोजगार, आवास और स्वच्छ जल के स्रोत नहीं हैं, उन्हें आवास दिया जाए तथा वयस्क महिलाओं को रोजगार पर लगाया जाए।
- गांव में उद्यमशीलता को प्रोत्साहन दिया जाए।
- महिला पंचायत प्रतिनिधि बड़ी संख्या में अशिक्षित हैं जो उनके लक्ष्य तक पहुंचने में मुख्य बाधा है। अतः महिला साक्षरता पर विशेष ध्यान देना होगा। महिला शिक्षा को अनिवार्य करना होगा। शिक्षा के आधुनिक तरीकों, फिल्म, कंप्यूटर आदि से उन्हें इस प्रकार की शिक्षा उपलब्ध करानी होगी जिससे उनमें पढ़ने के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो। गांव की महिला शिक्षिका द्वारा स्थानीय तरीके से शिक्षा का प्रबंध करना होगा।
- महिलाओं को लघु एवं कुटीर उद्योगों में लगाया जाना चाहिए जिससे उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ पारिवारिक रोजगार एवं आय में वृद्धि की जा सकती है।
- वानिकी एवं प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए।
- महिलाओं को संगठित होकर पुरुष प्रधान मानसिक व्यवस्था को बदलना होगा। महिला प्रतिनिधि संगठन बनाना होगा।
- महिलाओं को समझौतावादी नीति छोड़कर अपनी राय को महत्व देना होगा।

निष्कर्ष

सरकार ने पंचायतों में आरक्षण के आधार पर महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित कर दी है। तथा महिला सरपंचों, पंचों एवं अन्य प्रतिनिधियों को पुरुष प्रधान राजनैतिक व्यवस्था में अपनी भूमिका निभाने के लिए खड़ा कर दिया है। मगर इस भूमिका की सफलतापूर्वक अदायगी के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान नहीं किया गया। ऐसा नहीं है कि सभी महिलाएं अनपढ़ तथा प्रशासनिक दृष्टि से गैर जानकार हों मगर उन्हें भी उनके परिवारजन 'डमी' बनाकर उनके अधिकार का दुरुपयोग करते हैं। महिला नेतृत्व को पुष्ट करने के लिए सरकारी प्रयास के अलावा स्थानीय लोगों और गैरसरकारी संस्थाओं, संगठनों द्वारा महिलाओं के छोटे–छोटे समूह बनाए जाएं। ये संगठन समूह इन महिलाओं में आत्मविश्वास का संचार करेंगे और सक्रिय रूप से सहयोगी की भूमिका ग्रामसभा में भी निभाएंगे ताकि योजना बनाने से लेकर निर्णय तक में महिला भागीदारी को जगह मिले। पिछड़ी जातियों के ग्राम प्रधान सरपंच सत्ता की मान्यता प्राप्त नहीं कर पाते हैं जो उच्च जातियों के ग्राम प्रधान और सरपंचों को है। निर्वाचित सरपंचों तथा पंचों के साथ अत्याचार की घटनाएं आज भी सुनाई पड़ती हैं। अस्पृश्य वर्ग को सवर्ण के समक्ष पूर्ण मान्यता नहीं मिली है। इस व्यावहारिक असफलता के मुख्य कारण हैं धार्मिक विश्वास, रूढ़ियां आदि।

यह सही है कि अभी ग्रामीण महिलाओं को प्रभावशाली भूमिका निभाने लायक बनने में समय लगेगा किंतु चिंता की बात यह है कि पुरुषों का दृष्टिकोण सकारात्मक नहीं है। इससे महिलाओं के सशक्तीकरण की प्रक्रिया की राह आसान न होकर पथरीली और लंबी साबित होगी। मजदूरी करके पेट पालने वाले परिवारों की गरीब महिलाओं से काम छोड़कर पंचायतों में प्रभावशाली भूमिका की अपेक्षा करना बेमानी होगा। अतः उनके आर्थिक विकास हेतु भी विशेष प्रयास करने होंगे।

महिलाओं की समाज में वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह रेखांकित करना सही है कि केवल संविधान में अधिकारों की व्यवस्था मात्र से वे अधिकार संपन्न हो गई हैं, यह मान लेना ठीक नहीं है। महिलाओं के विशेष संदर्भ में समाज और संविधान के मध्य गत्यात्मक संबंध है। संविधान की भावनाओं को व्यावहारिक बनाने के लिए पुनः सामाजिक सुधार को आंदोलन का रूप देना होगा। वास्तविक रूप में महिलाओं को सशक्त करने के लिए जरूरत है उन्हें सम्मान, सहयोग और सुरक्षित वातावरण उपलब्ध कराने की। ❑

भारतीय सामाजिक संस्थान
10, इंस्टीट्यूशनल एरिया
लोदी रोड
नई दिल्ली–110003

विकास के दोराहे पर खड़ी जनजातीय महिलाएं

सुभाष सेतिया*

भारत विश्व के उन इने–गिने देशों में से एक है जो अपनी ऐतिहासिक प्राचीनता, भौगोलिक विशालता और सांस्कृतिक विविधिता पर गर्व कर सकते हैं। कोई भी समाज जितना प्राचीन होता है, उसमें उतनी अधिक बहुलता और विविधता पाई जाती है। यही कारण है कि हमारे यहां सामाजिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक विविधता अपने चरम रूप में मौजूद है। जहां एक ओर महानगरों में आधुनिकता की चमक और गति हमें रोमांचित और स्तब्ध कर देती है, वहीं देश के सुदूर और अंदरूनी क्षेत्रों, वन प्रदेशों और पहाड़ों पर बसे समुदायों का जनजीवन हमें यह सोचने पर विवश करता है कि हम कितनी मंथर गति से आगे बढ़ रहे हैं। कुछ वर्गों, विशेषकर जनजातियों, को देखकर यह आभास होता है कि जीवन लगभग स्थिर है। ये जनजातियां या आदिवासी समुदाय हमारी विविधता और प्राचीनता की पुष्टि करते प्रतीत होते हैं।

शायद बहुत कम लोगों को मालूम होगा कि भारत में जनजातीय लोगों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है। 1991 की जनगणना के अनुसार देश में 6 करोड़ 78 लाख जनजातीय संख्या थी जो कुल आबादी का 8.8 प्रतिशत थी। जनजातीय आबादी देश के लगभग सभी हिस्सों में मौजूद है। लेकिन आधी से अधिक यानी 54.04 प्रतिशत जनजातीय आबादी चार राज्यों – मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बिहार (झारखंड सहित) और राजस्थान में केंद्रित है। दूसरी ओर हरियाणा, जम्मू–कश्मीर, पंजाब, चंडीगढ़ और दिल्ली में जनजातीय आबादी नहीं है।

जनजातीय क्षेत्र और समुदाय दिल्ली से बहने वाली विकास की हवा से अभी तक भले ही अछूते हैं, किंतु उनके जीवन में कुछ तत्व ऐसे भी हैं जो उन्हें विकसित समाज से बेहतर बनाते हैं। जनजातीय महिलाओं की स्थिति विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि कुछ मामलों में देश की सामान्य महिलाओं से

* समाचार निदेशक, आकाशवाणी, नई दिल्ली।

समानता होते हुए भी कुल मिलाकर वे सर्वथा भिन्न धरातल पर खड़ी दिखाई देती हैं।

जनजातीय महिलाओं का सामाजिक स्तर

वास्तव में जनजातीय समाजों की आर्थिक–सामाजिक संरचना में महिलाओं की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। 1961 में देवर आयोग ने अपनी रिपोर्ट में यह निष्कर्ष दिया कि भारत के ग्रामीण तथा अन्य समुदायों की महिलाओं की तरह जनजातीय महिलाओं की स्थिति चाकरों और बोझा ढोने वाले जानवरों जैसी नहीं है। उन्हें अपने जीवन के बारें में निर्णय लेने के मामले में सामान्य महिलाओं के मुकाबले अधिक स्वतंत्रता और हैसियत प्राप्त है। भारतीय समाज की जटिल और कठोर जाति व्यवस्था में फंसी नारियों की तुलना में जनजातीय समुदायों की महिलाओं का दर्जा व रुतबा कहीं अधिक सम्मानजनक और सशक्त है। जिन जनजातियों में मातृसत्तात्मक व्यवस्था है, वहां तो महिलाओं की स्थिति अन्य समाजों से निश्चित रूप से बेहतर है। परंतु जनजातीय महिलाओं का दर्जा अपने समुदायों के पुरुषों से कम ही है।

शहरी समाज के संपर्क के कारण सामाजिक समानता में हाल में हुई कमी के बावजूद कई पारिवारिक व सामाजिक मामलों में जनजातीय महिलाएं अन्य समुदायों की महिलाओं से कहीं अधिक स्वतंत्रता और स्वाभिमान के साथ निर्णय ले सकती हैं। उदाहरण के लिए अधिकतर जनजातीय समुदायों में महिलाएं अपना जीवनसाथी चुनने और पति के साथ सुखपूर्वक रहने में कठिनाई होने पर तलाक लेने को स्वतंत्र हैं। इन समुदायों में विधवा विवाह पर कोई पाबंदी नहीं है। जनजातीय समुदायों में विधवाओं और तलाकशुदा औरतों को नीची नजरों से नहीं देखा जाता और उनके साथ विवाहित महिलाओं जैसा व्यवहार किया जाता है। इसके अलावा वे दहेज जैसी शर्मनाक और कलंकपूर्ण कुप्रथा से मुक्त हैं। यही नहीं, कई जनजातियों में तो 'दुल्हन मूल्य' की प्रथा प्रचलित है जिसमें विवाह के मौके पर दूल्हे के मां–बाप दुल्हन के मां–बाप को धन देते हैं। यह मूल्य धन के अलावा किसी वस्तु या सेवा के रूप में भी दिया जा सकता है। यह प्रथा समाज में स्त्रियों की आर्थिक उपयोगिता और सामाजिक महत्व को रेखांकित करती है।

यहां यह बात भी उल्लेखनीय है कि परंपरागत जनजातियों में महिलाओं को और भी अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है। जो जनजातियां शिक्षा के प्रसार, औद्योगीकरण और आधुनिक रहन–सहन तथा हिंदुत्व की सामाजिक कुप्रथाओं से प्रभावित होती जा रही हैं, उनमें महिलाओं की प्रतिष्ठा और सामाजिक सत्ता कम होती जा रही है। परंतु गोंड, मुड़िया, दोराला जैसी अनेक जनजातियों में न केवल अपना पति चुनने का बल्कि विवाहेतर संबंध रखने के अधिकार को भी सामाजिक मान्यता प्राप्त है। इन जातियों में विवाह के लिए लड़की की पसंद अनिवार्य है। यदि पति का व्यवहार ठीक न हो तो वे उसे तलाक दे सकती हैं। इन जनजातियों में विधवा विवाह आम बात है परंतु बाल विवाह को बुरा माना जाता है। जनजातीय आबादी में पुरुषों की तुलना में महिलाओं का संतुलित अनुपात जनजातीय महिलाओं की सामाजिक स्थिति का एक और मापदंड है। यह अनुपात राष्ट्रीय अनुपात से काफी अधिक है। यह अनुपात 1961, 1971, 1981, 1991 और 2001 में क्रमशः 987, 982, 983 और 972 था जबकि शेष देश में यह क्रमशः 941, 930, 934, 927 और 933 था।

आर्थिक स्थिति

आदिवासी समुदायों में सामाजिक जीवन की तरह आर्थिक गतिविधियों में भी स्त्रियों का महत्वपूर्ण स्थान है। उधर 'दुल्हन मूल्य' की जिस प्रथा का उल्लेख किया गया है, वह परिवार में स्त्री की आर्थिक उपयोगिता का ही परिणाम है। पिछले कुछ दशकों में गैर–जनजातीय समुदायों के बढ़ते प्रभाव के कारण आए कुछ परिवर्तनों के बावजूद जनजातीय महिलाएं अपने समुदाय के आर्थिक जीवन में विशेष भूमिका निभा रही हैं। खेती में बराबर की हिस्सेदारी के साथ–साथ वे परिवार को चलाने में भी भरपूर योगदान करती हैं। परंतु वे घर में दासी की तरह नहीं बल्कि गृहस्थी की संचालक की तरह होती हैं और उनकी मर्जी और इच्छा को पूरा महत्व मिलता है। अन्य महिलाओं की तरह वे खाना पकाने, सफाई, चौका आदि सामान्य घरेलू काम संभालने के साथ–साथ पानी भरने, मवेशी पालने, ईंधन तथा वन उत्पाद एकत्र करने का जिम्मा भी उठाती हैं। जिन जनजातियों में झूम खेती यानी स्थान बदल–बदल कर खेती करने की प्रथा प्रचलित है, वहां बुवाई और कटाई का काम महिलाएं ही संभालती हैं, जबकि पुरुष जंगलों में स्थान ढूंढ़ने और उसे खेती के लिए तैयार करने जैसे काम करते हैं।

कुछ जनजातियों में कई व्यवसाय केवल महिलाओं के जिम्मे रहते हैं। उदाहरण के लिए पूर्वोत्तर भारत में बसी खासी जनजाति में, जो मातृसतात्मक हैं, मछलियां बेचने, कपड़े सिलने, कार्यालयों में चाय, खाने–पीने की चीजें तथा अन्य वस्तुएं सप्लाई करने का काम केवल महिलाएं संभालती हैं। इस जनजाति के लोगों द्वारा आलू, संतरा, अनानास, सुपारी जैसी वस्तुएं उगाई जाती हैं और इनकी काश्तकारी करने वालों में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक होती है।

जनजातीय जीवन का वनों से बहुत गहरा संबंध है। क्योंकि घर–गृहस्थी संभालने का दायित्व महिलाओं का है, इसलिए पानी लाने और चारा–ईंधन, फल–फूल कंदमूल आदि एकत्र करने के लिए वे जंगलों में जाती हैं। जनजातियों के लोग खेती भी जंगल साफ करके करते हैं जिनमें औरतों की सक्रिय भागीदारी होती है, अतः आदिवासी महिलाओं का वनों से सतत संपर्क बना रहता है। एक प्रकार से वन ही आदिवासियों, विशेषकर महिलाओं के जीवन का सहारा है। यों भी कह सकते हैं कि उनका अस्तित्व ही वनों पर टिका है।

यह सही है कि बहुत कम जनजातियों में महिलाओं को भूमि के मालिकाना हक प्राप्त हैं परंतु इस मामले में भी उनकी स्थिति अन्य महिलाओं से बेहतर है। यहां घर के सदस्यों में पुश्तैनी संपत्ति बेटों व बेटियों में समान रूप से विभाजित करने की प्रथा है। कांड जनजाति

में पति की मृत्यु पर उसके हिस्से की जमीन पत्नी को मिल जाती है। परंतु ऐसा तभी होता है जब उसकी देखभाल के लिए जवान बेटे न हों। यदि कोई लड़की मां–बाप की इकलौती संतान है तो सारी संपत्ति उसे मिलती है।

ईसाई जनजातियों की महिलाएं आर्थिक दृष्टि से अपेक्षाकृत अधिक विकसित हैं। इन वर्गों की महिलाएं नए और गैरपरंपरागत व्यवसाय करने लगी हैं। ईसाई धर्म में बचत पर विशेष बल दिया जाता है, जिससे प्रेरित होकर महिलाएं अपनी कमाई की रकम ऐशो–आराम की चीजें खरीदने की बजाय संभाल कर रखती हैं और उससे जमीन–जायदाद खरीद लेती हैं। इस बदलाव के कारण उनमें आत्मविश्वास जाग रहा है और वे राजनीतिक सत्ता में भी भागीदारी करने लगी हैं।

शिक्षा

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि शहरी प्रभाव से महिलाओं के परंपरागत अधिकार कम होते जा रहे हैं। औद्योगीकरण से उनकी जमीन और वन क्षेत्र में कमी हो रही है जिससे उनके जीवनयापन के स्रोतों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। वनों की कटाई होने से महिलाओं को ईंधन और वन उत्पादों के लिए बहुत दूर जाना पड़ता है। यही नहीं, वन स्रोत घट जाने से महिलाएं अधिक निर्धन, पराश्रित और मजबूर बनती जा रही हैं। जनजातीय लोगों का शोषण भी बढ़ रहा है। अबोध और अशिक्षित होने के कारण उनके श्रम संबंधी शोषण के साथ–साथ महिलाओं का शारीरिक शोषण भी किया जाता है। जनजातीय समाजों में मौजूद सेक्स संबंधी खुलेपन का लाभ उठाकर गैर–जनजातीय पुरुष महिलाओं को अपनी हवस का शिकार बनाते हैं। यह सब इसलिए हो रहा है क्योंकि वहां शिक्षा का नितांत अभाव है। अशिक्षा के कारण वे अपने पक्ष में बनाए गए कानूनों को भी नहीं समझ पातीं और वन उत्पादों पर अपने अधिकारों की रक्षा नहीं कर पातीं।

वास्तव में आदिवासियों में साक्षरता का अभाव चिंता का विषय है। मुख्यधारा से कटे रहने के कारण जनजातीय समुदायों में शिक्षा प्रसार का काम काफी देर से शुरू हो पाया है। हां, जिन क्षेत्रों में ईसाई मिशनरी सक्रिय हुए, वहां अवश्य शिक्षा की व्यवस्था पहले हो गई थी। परंतु महिलाएं इस मामले में काफी पीछे हैं। 1991 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार देश में सात वर्ष से ऊपर के पुरुषों की साक्षरता की दर 64.13 प्रतिशत और महिलाओं की 39.29 प्रतिशत थी। इसकी तुलना में जनजातीय आबादी में यह दर पुरुषों में 25.9 प्रतिशत और महिलाओं में केवल 14.5 प्रतिशत थी। मध्य प्रदेश की जनजातियों में साक्षरता दर मात्र 3.3 प्रतिशत थी। पूर्वोत्तर राज्यों में साक्षरता दर ईसाई मिशनरियों के प्रयासों के कारण अपेक्षाकृत अधिक है। 1981 के बाद से जनजातीय क्षेत्रों में साक्षरता में उल्लेखनीय वृद्धि हो रही है, जिससे महिलाओं की साक्षरता दर में भी सुधार हो रहा है।

उपलब्धियां और चुनौतियां

यों तो विकास के आधुनिक उपायों के कारण जनजातीय महिलाओं के लिए बढ़ रही कठिनाइयों से उन्हें मुक्ति दिलाने के लिए बहुआयामी प्रयासों की आवश्यकता है, किंतु उन्हें साक्षर बनाना शायद सबसे बड़ी प्राथमिकता है। हालांकि जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा और साक्षरता के प्रयास देर से शुरू हुए हैं किंतु सरकार इन वर्गों, खासकर लड़कियों की शिक्षा के विशेष कार्यक्रम चलाकर वहां निरक्षरता दूर करने के प्रयास कर रही है। लड़कियों को शिक्षण संस्थाओं में आवासीय सुविधा उपलब्ध कराने के लिए तीसरी पंचवर्षीय योजना में बालिका छात्रावास कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। इसके अंतर्गत राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को बालिका छात्रावास के निर्माण के लिए क्रमशः 50 प्रतिशत और 100 प्रतिशत केंद्रीय सहायता दी जाती है।

1993–94 में 8 राज्यों के ऐसे 48 जिलों में आदिवासी लड़कियों को साक्षर बनाने का एक विशेष कार्यक्रम शुरू किया गया, जहां महिला साक्षरता दर 2 प्रतिशत से भी कम थी। 1998 में इस योजना का विस्तार किया गया और अब यह 14 राज्यों के ऐसे 134 जिलों में चल रही है, जहां महिला साक्षरता दर 10 प्रतिशत से कम है। यह योजना स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से चलाई जाती है और इसके अंतर्गत लड़कियों की पहली से पांचवी कक्षा तक की पढ़ाई के लिए शिक्षण केंद्र खोले जाते हैं। वर्ष 2000–2001 के दौरान इस योजना के तहत 38 केंद्रों के लिए 1.47 करोड़ रुपये की सहायता उपलब्ध कराई गई।

इसके अलावा मैट्रिक के बाद विभिन्न तकनीकी तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेने तथा रोजगार संबंधी प्रशिक्षण की भी अनेक योजनाएं चल रही हैं जिनसे लाभ उठाकर जनजातीय लड़कियां योग्यता और आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त कर सकती हैं।

इन सब प्रयासों के बावजूद जनजातीय महिलाएं कई प्रकार के शोषण, विषमता और असुरक्षा की शिकार हैं। समस्या यह है कि आधुनिक विकास के प्रभाव से उनके परंपरागत सामाजिक अधिकारों और स्वतंत्रताओं में कमी और उनकी जिम्मेदारियां व बोझ में वृद्धि हो रही है परंतु उनमें नई चुनौतियों को झेलने की क्षमता और चेतना पैदा करने के पर्याप्त प्रयास नहीं हो रहे हैं। जनसंचार तथा उच्च आधुनिक उपकरणों व प्रवृत्तियों के कारण उनका जीवन तेजी से बदल रहा है और उन्हें विविध प्रकार के अवसरों और चुनौतियों से दो–चार होना पड़ रहा है। जनजातीय महिलाओं में अपने प्रति, अपने आसपास के परिवेश के प्रति और व्यापक समाज के प्रति समझ और जागरूकता बढ़ रही है। चेतना और सामाजिक सक्रियता की सीढ़ियों पर चढ़ती जनजातीय महिलाओं को इस समय पहले से कहीं अधिक मार्गदर्शन, शिक्षण और सहारे की आवश्यकता है। सरकार, समाज और स्वयंसेवी संस्थाएं आपसी तालमेल से इस चुनौती को स्वीकार करने के लिए आगे आएं तो अब तक अपने को मुख्यधारा से कटी हुई महसूस करने वाली जनजातीय महिलाएं न केवल भारतीय समाज की मुख्यधारा का अभिन्न अंग बन सकेंगी बल्कि देश और मानवता की प्रगति में सक्रिय और उपयोगी भूमिका भी निभाने लगेंगी। ❑

1370, सेक्टर–12
रामकृष्णपुरम
नई दिल्ली–110022

ग्रामीण महिलाओं के लिए विकास कार्यक्रम

डा. दिनेश कुमार शर्मा

ग्रामीण महिलाएं शैक्षिक आर्थिक और सामाजिक रूप से काफी पिछड़ी हुई हैं तथा उन्हें वित्तीय संस्थाओं, प्रशिक्षण एवं प्रसार तकनीकों का ज्ञान नहीं है जिसके फलस्वरूप सरकार की विभिन्न विकास योजनाओं का उन्हें अपेक्षित लाभ नहीं मिला है। यहां प्रस्तुत है महिलाओं के शैक्षिक, आर्थिक, राजनीतिक सशक्तीकरण सहित उनके सर्वांगीण विकास के लिए केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय और केंद्र सरकार के विभिन्न मंत्रालयों द्वारा चलाई जाने वाले कार्यक्रमों की संक्षिप्त जानकारी।

महिलाएं न केवल आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं, अपितु शेष आधी आबादी की वृद्धि एवं विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। निःसंदेह मानव विकास में महिलाएं एक महत्वपूर्ण घटक हैं। महिलाओं की आय तथा जीवन स्तर में सुधार करके हम स्थाई वृद्धि तथा विकास सुनिश्चित कर सकते हैं। महिलाएं साहस, सहनशीलता, तथा धैर्य जैसे अदम्य मानवीय मूल्यों के चलते विकास की गतिविधियों में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं जबकि विकास की अनेक योजनाओं में महिलाओं की अनदेखी की गई है तथा उन्हें विकास की योजनाओं में उचित हिस्सेदारी नहीं मिल पाई है।

महिलाओं की सामाजिक – आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए विभिन्न विकास योजनाएं और कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं परंतु महिलाओं के सर्वांगीण विकास हेतु विकास कार्यक्रमों के निर्माण, नियमन तथा क्रियान्वयन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए तभी हम सच्चे अर्थों में महिला सशक्तीकरण की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं। 1961 की जनगणना के अनुसार महिलाओं की साक्षरता दर 18.69 प्रतिशत थी जो 2001 की जनगणना में 54.16 प्रतिशत हो गई अर्थात महिलाओं में साक्षरता वृद्धि तो अवश्य हुई है लेकिन यह वृद्धि पर्याप्त नहीं है।

महिलाओं को अधिकार संपन्न बनाने के लिए साक्षरता एक अनिवार्य घटक है। राष्ट्रीय महिला आयोग की रिपोर्ट ''अनुसूचित जाति की महिलाओं का सामाजिक–आर्थिक विकास'' के अनुसार आजादी के इतने वर्षों बाद भी अनुसूचित जाति एवं जनजातियों की महिलाओं की स्थिति में अपेक्षाकृत सुधार नहीं हो पाया है तथा उनकी स्थिति अभी भी सोचनीय बनी हुई है। अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए स्थापित राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम ने 10 अप्रैल 2002 को अपनी स्थापना की पहली वर्षगांठ के अवसर पर अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के विकास की ओर अधिक ध्यान देने के लिए एक नई आदिवासी महिला सशक्तीकरण योजना प्रारंभ की है। इस योजना में अनुसूचित जनजातियों की महिलाओं के आर्थिक विकास हेतु रियायती दर पर वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

समय–समय पर सरकार द्वारा ऐसी अनेक योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है जिससे ग्रामीण महिलाओं का सर्वांगीण विकास सुनिश्चित किया जा सके। सामुदायिक विकास प्रथम पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत एक प्रमुख लक्ष्य था परंतु वास्तव में यह एक सरकारी कार्यक्रम बन कर रह गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना में पंचायतीराज के माध्यम से लोगों की विकास योजनाओं में भागीदारी सुनिश्चित की गई परंतु अफसरशाही के चलते इस योजना में लोगों की सक्रिय साझेदारी घटती गई। तीसरी तथा चौथी पंचवर्षीय योजनाओं में समाज के उपेक्षित वर्ग जैसे सीमांत किसान, सूखाग्रस्त क्षेत्र आदि पर विशेष ध्यान दिया गया। पांचवीं और छठी पंचवर्षीय योजना में गरीबी उन्मूलन पर विशेष ध्यान दिया गया। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के तहत गरीबी की रेखा के नीचे ग्रामीण परिवारों को वित्तीय संस्थानों की मदद से ऋण तथा स्वतः रोजगार के अवसर उपलब्ध कराए गए।

यद्यपि इन विकास योजनाओं में महिलाओं को कोई विशेष रियायत नहीं दी गई परंतु महिलाएं गरीबी की सबसे ज्यादा मार झेलती हैं अतः अप्रत्यक्ष रूप से महिलाएं भी इन विकास योजनाओं से लाभान्वित हुईं।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा ग्रामीण युवकों को स्वतः रोजगार के अवसर प्रदान करने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रमों में 40 प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित कर दिए गए हैं। 1974 विभिन्न विकास योजनाओं में महिलाओं को एक महत्वपूर्ण घटक माना गया इसके कारण छठी पंचवर्षीय योजना में पहली बार ''महिला एवं विकास'' के नाम से एक नया अध्याय जोड़ा गया।

नेशनल प्रोस्पेक्टिव प्लान (1988–2000) भारत सरकार द्वारा तैयार किया गया तथा गैरसरकारी क्षेत्रों में असगंठित रूप से महिला श्रमिकों के हितों को ध्यान रखते हुए 1988 में श्रमशक्ति नामक संगठन का गठन हुआ। इसके पश्चात नीति निर्धारकों का ध्यान महिलाओं से

जुड़ी अन्य सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक समस्याओं की तरफ आकृष्ट हुआ। आज ऐसे गैरसरकारी संगठनों की संख्या काफी बढ़ गई है जो महिलाओं के हितों के लिए लगातार आवाज बुलंद कर रहे हैं।

ग्रामीण महिलाएं शैक्षिक, सामाजिक रूप से काफी पिछड़ी हुई हैं तथा उन्हें वित्तीय संस्थाओं, प्रशिक्षण एवं प्रसार तकनीकों का ज्ञान नहीं है जिसके फलस्वरूप सरकार की विभिन्न विकास योजनाओं का उन्हें अपेक्षित लाभ नहीं मिला है। यहां प्रस्तुत है महिलाओं के शैक्षिक, आर्थिक, राजनीतिक सशक्तीकरण सहित उनके सर्वांगीण विकास के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय सहित केंद्र सरकार के विभिन्न मंत्रालयों द्वारा चलाई जाने वाले कार्यक्रमों की जानकारी। 1992 के 73वें तथा 74वें संविधान संशोधन द्वारा ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटों के आरक्षण की व्यवस्था की गई है, यह महिला सशक्तीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस प्रक्रिया में महिलाएं केवल एक लाभार्थी ही नहीं बल्कि सामाजिक बदलाव लाने के लिए उत्तरदायी एक प्रमुख घटक के रूप में कार्य करेंगी।

एशिया के कुछ देशों में मानव विकास एवं कृषि में महिलाओं की भागीदारी

देश	मानव विकास सूचकांक (एचडीआई) 1996	लिंग विकास सूचकांक (जीडीआई) 1996	कृषि कार्य में संलग्न श्रमिकों का प्रतिशत 1994
बांग्लादेश	143	116	65
भूटान	159	–	95
कंबोडिया	156	–	75
चीन	108	79	74
भारत	135	103	78
इंडोनेशिया	102	76	44
ईरान	66	75	69
जापान	3	12	–
लाओस	138	106	76
मलेशिया	53	43	31
मालदीव	107	80	25
म्यांमार	133	102	35
नेपाल	151	124	97
पाकिस्तान	134	107	15
फिलीपिंस	25	70	34
श्रीलंका	89	62	50
वियतनाम	121	91	57
थाइलैंड	52	33	64
कोरिया गणराज्य	29	31	31

स्रोत : यूएनडीपी 1995

ग्रामीण महिला विकास के विभिन्न कार्यक्रम

ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं एवं बच्चों का विकास (ड्वाकरा) : इस योजना के तहत गरीब ग्रामीण महिलाओं के समूह को जिनकी संख्या 10 से 15 होती है उनकी क्षमता एवं योग्यता के आधार पर आर्थिक मदद दी जाती है। 25,000 रुपये तक की मदद का प्रावधान इस योजना के तहत किया जाता है। इस तरह की यह अपने आप में अनूठी योजना है। जिसमें आर्थिक स्वावलंबन द्वारा महिला सशक्तीकरण का प्रयास किया गया है। वर्तमान में इस योजना के तहत ज्ञान संवृद्धि एवं प्रशिक्षण तथा सूचना तकनीक की सहायता से भी महिला सशक्तीकरण का कार्य किया जा रहा है। इस कार्यक्रम में सलंग्न महिलाओं के लिए बाल कल्याण कार्यक्रम भी चलाया जा रहा है ताकि ग्रामीण बच्चों को उचित चिकित्सकीय देखभाल तथा पोषण मिल सके। ड्वाकरा समूह की महिलाओं को कार्यकुशल बनाने के लिए नई योजना में विशेष प्रावधान किए गए हैं, तथा ग्रामीण महिलाओं के लिए उदार वित्तीय ऋण, एवं अनेक आधारभूत सुविधाएं प्रदान की गई हैं। ड्वाकरा द्वारा तैयार सामान के विपणन की भी हथकरघा निगम, खादी एवं ग्रामीण विकास उद्योग, राज्य एम्पोरियम, ग्रामीण तकनीकी संस्थानों एवं राष्ट्रीय लघु उद्योग विकास निगम जैसी संस्थाओं के माध्यम से व्यवस्था की गई है। ड्वाकरा योजना के तहत मानव ससांधन विकास पर भी ध्यान दिया गया है।

इंदिरा विकास योजना : इस योजना के तहत निर्धन ग्रामीण महिलाओं को निशुल्क मकान की व्यवस्था की गई है। इस योजना में विधवाओं, विकलांग महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है। मकान का स्वामित्व महिला के नाम किया जाता है अथवा पति तथा पत्नी सम्मिलित रूप से मकान के स्वामी होते हैं।

जवाहर रोजगार योजना : इस कार्यक्रम का प्राथमिक उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार और अल्प रोजगार वाले पुरुषों एवं महिलाओं दोनों के लिए अतिरिक्त लाभकारी रोजगार का सृजन करना है। इस योजना में रोजगार के 30 प्रतिशत अवसर महिलाओं के लिए आरक्षित हैं। केंद्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में शौचालय निर्माण की व्यवस्था की गई है। ग्रामीण महिलाओं को हैंडपंप की मरम्मत करने का भी प्रशिक्षण दिया गया है। कपार्ट ऐसे स्वैच्छिक संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान करता है जो कि ग्रामीण महिलाओं के उत्थान के लिए कार्य करते हैं।

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना : वर्ष 2002–2003 के केंद्रीय बजट में इस योजना के लिए 710 करोड़ रुपये प्रदान किए गए हैं जो पूर्ण रूप से स्वरोजगार कार्यक्रमों के लिए हैं। इस योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों की स्थापना करना है। इस योजना में 50 प्रतिशत

स्वरोजगारी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति तथा 40 प्रतिशत महिलाएं और 3 प्रतिशत विकलांग होंगे।

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम : इस कार्यक्रम की शुरुआत अगस्त 1995 में की गई। इस कार्यक्रम के तहत गरीबी की रेखा के नीचे जीवन निर्वाह करने वाले लोगों विशेषतः महिलाओं को लक्ष्य बनाया गया। राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के तहत गरीब गर्भवती महिलाओं को पहले दो बच्चों के लिए 300 रुपये प्रतिमाह दिया जाता है। राष्ट्रीय वृद्ध पेंशन योजना के अंतर्गत 65 वर्ष से ऊपर के वृद्ध पुरुष एवं महिलाएं जिनकी आमदनी का कोई अन्य स्रोत नहीं है, पेंशन प्राप्त कर सकते हैं।

महिला समृद्धि योजना : यह योजना 1993 में लागू की गई। इसके अंतर्गत महिलाओं को गृह संपत्तियों पर अधिकार दिए गए तथा आर्थिक स्वावलंबन के प्रयास किए गए।

राष्ट्रीय महिला कोष : इसके द्वारा गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से महिलाओं के आर्थिक विकास हेतु ऋण प्रदान किया जाता है।

सरकार के विभिन्न मंत्रालयों द्वारा महिला कल्याण हेतु चलाई जाने वाली योजनाएं

ग्रामीण विकास विभाग : ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम

शिक्षा विभाग : गैरपारंपरिक शिक्षा (लड़कियों के लिए)

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय : बाल जीविता एवं सुरक्षित मातृत्व, एकीकृत प्रतिरक्षण कार्यक्रम, पोषकीय रक्ताल्पता एवं विटामिन कार्यक्रम।

श्रम कल्याण मंत्रालय : अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति महिला छात्रावास, महिला वोकेशनल प्रशिक्षण कार्यक्रम, महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना, अपंग महिलाओं हेतु वोकेशनल केंद्र, कार्यकारी महिला हेतु छात्रावास, प्रौढ़ महिलाओं हेतु पाठ्यक्रम का विकास, ग्रामीण एवं गरीब महिलाओं में जागरुकता अभियान, एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम, महिलाओं के प्रशिक्षण एवं रोजगार के लिए सहयोग, राष्ट्रीय महिला कोष, महिला समृद्धि योजना।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय : महिलाओं हेतु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग।

ग्रामीण क्षेत्रों की कुल महिला मजदूरों का 89.5 प्रतिशत कृषि तथा इससे संबंधित उद्योग क्षेत्रों में लगा है। हिमालय क्षेत्र में किए गए एक अध्ययन के अनुसार एक एकड़ खेत में बैलों की एक जोड़ी साल में 10,640 घंटे, एक पुरुष 1,212 घंटे और एक महिला 3,485 घंटे कार्य करती है।

आठवीं योजना 1993–94 की सेंट्रल सेक्टर स्कीम के अंतर्गत कृषि में महिलाओं की दक्षता को बढ़ाने के लिए सात राज्यों, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, तथा केरल में यह योजना लागू की गई। इस योजना के तहत ग्रामीण महिलाओं को प्रसार तकनीकों तथा उन्नतशील कृषि के विभिन्न पहलुओं के विषय में जानकारी प्रदान की जाती है तथा महिला किसानों के लिए शैक्षिक भ्रमण तथा कृषि गोष्ठियों का आयोजन भी किया जाता है।

नवीं योजना में इसका विस्तार 28 राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों में किया गया। ग्रामीण महिलाओं को नई–नई कृषि तकनीकों एवं कृषि उपकरणों के प्रयोग की जानकारी देकर कृषि कार्य में लगी हुई महिलाओं के जीवन स्तर में सुधार किया जा सकता है। कृषि प्रसार के कार्य में लगे विशेषज्ञों के अनुसार महिलाएं बेहतर संप्रेषण कर सकती हैं तथा एक महिला प्रसार कार्यकर्ता महिला किसान को सरलता एवं बेहतर ढंग से जानकारी प्रेषित कर सकती है।

सारणी में एशिया के कुछ देशों में मानव विकास सूचकांक एवं कृषि में महिलाओं की भागेदारी को दर्शाया गया है। नेपाल में 97 प्रतिशत महिला श्रमिक कृषि में संलग्न है जबकि भारत में यह 78 प्रतिशत है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने कृषि में संलग्न महिलाओं के बारे में भुवनेश्वर में राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र स्थापित किया है। यह केंद्र ग्रामीण महिलाओं को उनके हुनर में सुधार करने तथा खाद्य एवं पौष्टिक आहार सुरक्षा सुनिश्चित करने के राष्ट्रीय प्रयास में ग्रामीण महिलाओं को भागीदार बनाने के लिए तैयार करता है।

महिला सशक्तीकरण नवीं योजना का प्रमुख लक्ष्य है। महिलाओं के आर्थिक सामाजिक एवं शैक्षिक विकास के लिए केंद्र सरकार ने अनेक सकारात्मक कदम उठाए हैं। नवीं योजना में महिलाओं के विकास के लिए 30 प्रतिशत धन महिला स्वयं मदद संस्थानों के लिए आरक्षित किया है। महिला स्वास्थ्य की तरफ समुचित ध्यान दिया गया है तथा महिलाओं के पोषण स्तर को सुधारने के लिए अनेक कार्यक्रम चलाए गए हैं जैसे दोपहर का भोजन, विशेष पोषण कार्यक्रम। सुरक्षा के क्षेत्र में भी महिलाओं को अनेक सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं। 12वीं तक की शिक्षा की निशुल्क व्यवस्था की गई है तथा महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों पर नियंत्रण के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं तथा कानूनों के क्रियान्वयन को लागू कराने हेतु राष्ट्रीय महिला आयोग जैसी संस्थाएं काम कर रही हैं। महिला सशक्तीकरण वर्ष के संदर्भ में विभिन्न राज्य सरकारों ने कई कदम उठाए हैं। राजस्थान तथा मध्य प्रदेश की सरकारें महिलाओं के लिए व्यापक नीति तैयार कर रही हैं तथा उडीसा सरकार ने राज्य में महिलाओं के लिए एक लाख स्वःसहायता दल बनाने के उद्देश्य से मिशन शक्ति नामक योजना प्रारंभ की है।

आजादी मिलने के आधी सदी बीतने के बाद भी महिलाओं, विशेषतः ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में कोई विशेष फर्क नहीं आया है। शहरी क्षेत्र की महिलाओं ने तो अपनी सफलताओं के नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। वे विश्व सुंदरी से प्रधानमंत्री तक का भी सफर तय कर चुकी हैं परंतु आज भी ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं इस प्रकार के परिवर्तनों से मीलों दूर हैं। ऐसा नहीं है कि ग्रामीण महिलाओं के लिए विकास योजनाएं नहीं बनीं परंतु उन विकास योजनाओं के क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन हेतु सार्थक प्रयास नहीं किए गए। जिसके फलस्वरूप ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति में कोई खास बदलाव नहीं आ पाया है। जब तक विकास योजनाओं में महिलाओं की सक्रिय सहभागिता नहीं होगी तब तक सच्चे अर्थों में सतत् विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। ❑

पर्यावरण विज्ञान संभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–12

उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला शिक्षा

जे.एन. सिंह*

शैक्षिक विकास में प्राथमिक शिक्षा का विशेष महत्व है। इसी स्तर पर व्यक्तित्व के विकास की आधारशिला रखी जाती है। भारतीय संविधान में देश के 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य निःशुल्क प्राइमरी शिक्षा प्रदान करने का प्राविधान किया गया था। संविधान की धारा–45 में शिक्षा के सार्वजनीकरण का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, जिससे कि स्वतंत्र भारत का प्रत्येक नागरिक शिक्षित हो जाय, अथवा कम से कम साक्षर तो हो जाय। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में सन् 2000 तक संपूर्ण साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त करने की दृष्टि से शैक्षिक विकेंद्रीकरण को ध्यान में रखकर उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा अधिनियम, 1972 की धारा–11 के अंतर्गत स्थापित ग्राम शिक्षा समितियों को व्यापक अधिकार भी प्रदान किए गए।

प्रदेश की महिला साक्षरता पर विचार करते हुए यह परिलक्षित होता है कि इसमें सापेक्षिक प्रगति नहीं हो रही है। वर्ष 1991 में जहां पुरुष साक्षरता 55.73 प्रतिशत थी, वहीं महिला साक्षरता केवल 25.31 प्रतिशत थी। वर्ष 1981 में महिला साक्षरता दर में वृद्धि (पुरुष 7.28 प्रतिशत महिलाएं 8.22 प्रतिशत) हुई है, किंतु संपूर्ण देश की तुलना में प्रदेश की महिला साक्षरता दर में गिरावट आई है। ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्र की महिला साक्षरता की दृष्टि से तुलना करने पर स्थिति और भी नाजुक प्रतीत होती है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार प्रदेश में नगरीय महिला साक्षरता 46.4 प्रतिशत के विपरीत ग्रामीण महिला साक्षरता केवल 19 प्रतिशत ही थी।

साक्षरता की स्थिति विशेषकर महिलाओं की समीक्षा करने के लिए प्रदेश के एक जनपद में एक अध्ययन किया गया। यह अध्ययन प्राथमिक शिक्षा तक ही सीमित रखा गया, क्योंकि बालिकाओं की प्राथमिक स्तर की शिक्षा पर समग्र महिला शिक्षा निर्भर करती है। इस जनपद में वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार समग्र साक्षरता 31.4 प्रतिशत थी, जो प्रदेश के औसत से काफी नीचे है। इसकी महिला साक्षरता का प्रतिशत 16.9 था। इस जनपद के 19 विकास खंडों में से 12 विकास खंडों की साक्षरता जिले के औसत से कम थी। चार विकास खंडों की साक्षरता का प्रतिशत 20 से भी कम था। ग्रामीण साक्षरता (28.8 प्रतिशत) से नगरीय साक्षरता का प्रतिशत (56.3) लगभग दूना था। जनपद की महिला साक्षरता पर दृष्टिपात करने पर स्थिति अत्यंत निराशाजनक प्रतीत होती है। पुरुषों की साक्षरता 43 प्रतिशत के विपरीत महिलाओं की साक्षरता 17 प्रतिशत ही थी। जनपद के चार विकास खंडों की महिलाओं की साक्षरता 10 प्रतिशत से भी कम थी। जनपद के नगरीय क्षेत्र की महिलाओं की 46 प्रतिशत साक्षरता के विपरीत ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता

*सेवानिवृत्त वरिष्ठ मूल्यांकन अधिकारी, मूल्यांकन प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उत्तर प्रदेश, लखनऊ।

तालिका 1

चयनित गांवों में 6–11 वर्ग के बच्चों की शैक्षिक स्थिति

(1996–97)

वर्ग	लड़के (संख्या)		कुल	लड़कियां (संख्या
	कुल	स्कूल न जाने वाले		स्कूल न जाने वाली
सामान्य	611	297 (49)	471	154 (32)
अनुसूचित जाति	423	191 (45)	264	162 (61)
पिछड़ा वर्ग	888	390 (40)	643	418 (67)
योग	1922	872 (43)	1378	734 (53)

नोटः कोष्ठक की संख्या प्रतिशत दर्शाती है।

स्रोत : प्रत्यक्ष जांच।

केवल 13 प्रतिशत थी। इतना बड़ा अंतर पुरुषों के संबंध में नहीं था। नगरीय पुरुषों की साक्षरता करीब 65 प्रतिशत थी तथा ग्रामीण पुरुष साक्षरता भी करीब 48 प्रतिशत थी।

अध्ययनगत जनपद में भी वर्ष 1993–94 से विश्व बैंक की सहायता से 'सभी के लिए शिक्षा' परियोजना संचालित की गई थी। इस परियोजना की मैदानी क्षेत्र में 1.5 किमी तथा 300 आबादी पर प्राथमिक स्कूल एवं 3 किमी दूरी (800 आबादी) पर उच्च प्राथमिक विद्यालय खोलने की नीति के अंतर्गत लगभग पूरा जनपद प्राथमिक विद्यालयों से आच्छादित किया जा चुका था। इसके अतिरिक्त अनेक अवस्थापनात्मक संरचनाएं भी सृजित की गईं। अध्ययनगत चयनित विकास खंड में वर्ष 1995–96 के अंत तक 111 जूनियर बेसिक स्कूल तथा 18 सीनियर बेसिक विद्यालय स्थापित किए जा चुके थे तथा अवस्थापनात्मक संरचनाएं भी विकसित की जा रही थीं, किंतु साक्षरता की स्थिति फिर भी शोचनीय थी। वर्ष 1991 की जनगणना के आधार पर इस विकास खंड की साक्षरता सबसे कम, अर्थात केवल 15 प्रतिशत थी। महिलाओं का साक्षरता प्रतिशत केवल 5.8 ही था। जैसा कि अगले प्रस्तरों में प्रस्तुत विश्लेषण से स्पष्ट होगा, इसकी शैक्षिक प्रगति में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं आया है।

अध्ययन के अंतर्गत चयनित विकास खंड के 18 गांवों का गहन रूप से सर्वेक्षण किया गया। इन गांवों में हाउस लिस्टिंग के आधार पर स्कूल जाने योग्य बच्चों का अभिज्ञापन किया गया। तदुपरांत इनमें से स्कूल जाने एवं न जाने वाले बच्चों का वर्गीकरण किया गया। प्राप्त विवरण आगे तालिका में प्रस्तुत किया गया है:–

उपर्युक्त तालिका यह संकेत करती है कि अनुसूचित जाति एवं पिछड़े वर्ग का रुझान लड़कों की शिक्षा की ओर बढ़ रहा है, किंतु लड़कियों की शिक्षा के प्रति वे अब भी अत्यंत उदासीन हैं।

सीनियर बेसिक स्कूल की शिक्षा में वर्ग विभेद उजागर हुआ है। लड़कों की शिक्षा के संबंध में सामान्य वर्ग के 11–14 वय वर्ग के स्कूल न जाने वाले प्रतिशत में जहां कमी आई है, अनुसूचित जाति एवं पिछड़े वर्ग में इस संबंध में लड़कों की शिक्षा के संबंध में 14 एवं 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। लड़कियों की शिक्षा के संबंध में तीनों ही वर्गों में स्कूल न जाने वाली लड़कियों के प्रतिशत में वृद्धि हुई है। विवरण निम्न तालिका में दिया गया है:

तालिका 2

11–14 आयु वर्ग के बच्चों की शैक्षिक स्थिति

(1996–97)

वर्ग	लड़के (संख्या)		कुल	लड़कियां (संख्या
	कुल	स्कूल न जाने वाले		स्कूल न जाने वाली
सामान्य	235	98 (42)	146	98 (67)
अनुसूचित जाति	132	78 (52)	74	51 (66)
पिछड़ा वर्ग	286	161 (56)	156	101 (65)
योग	653	337 (52)	376	250 (69)

नोटः कोष्ठक की संख्या प्रतिशत की द्योतक है।

स्रोत : प्रत्यक्ष जांच।

अध्ययनगत चयनित गांवों के जूनियर बेसिक स्कूलों से वर्ष 1992–93 एवं 1996–97 की नामांकन की स्थिति ली गई, जिससे यह ज्ञात हुआ कि पांचवीं कक्षा तक आते–आते काफी 'ड्रॉप–आउट्स' हो जाते हैं। लड़के व लड़कियों के संबंध में 'ड्राप–आउट्स' क्रमशः 45 एवं 54 प्रतिशत था। यह विचारणीय है कि लक्षित वर्ग में से करीब 53 प्रतिशत बालिकाओं का नामांकन ही नहीं कराया जाता है और शिक्षा प्रारंभ करने वाली बालिकाओं में से करीब 54 प्रतिशत बालिकाएं शैक्षिक ह्रास एवं अवरोध का शिकार हो जाती हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण महिला सफलता की ओर अग्रसर नहीं हो रही हैं।

ग्रामीण बालिका शिक्षा की इस प्रकार की स्थिति के संबंध में बालिकाओं के 300 अभिभावकों से अनुसूची के माध्यम से साक्षात्कार किया गया। प्राप्त उत्तरों को तालिकाबद्ध रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इस तालिका में प्रस्तुत कारणों से ऐसा परिलक्षित होता है कि विद्यालयों की स्थिति एवं पर्यवेक्षण व्यवस्था प्रमुख कारण के रूप

तालिका 3

बालिका शिक्षा में प्रगति न होने का कारण

(बहुउत्तरीय)

कारण	उत्तरदाता संख्या	प्रतिशत
विद्यालयों की शोचनीय स्थिति	186	62.00
पर्यवेक्षण की कमी	132	40.66
आर्थिक समस्याएं	46	15.33
जनमानस की उदासीनता	35	11.66
अध्यापिकाओं के ज्ञान में कमी	32	10.66
सामाजिक कुरीतियां	26	8.66

स्रोत : प्रत्यक्ष जांच

में उभर कर आए हैं। इन कारणों के निवारण के रूप में ग्राम शिक्षा समितियों की स्थापना की गई थी, किंतु ये समितियां कारगर नहीं हैं। इसके लिए सामान्य जनमानस की उदासीनता एवं ग्राम शिक्षा समिति की प्राविधानित व्यवस्था में कतिपय कमियां हैं, जिन पर यहां चर्चा करना अप्रासंगिक होगा। सामाजिक कुरीतियों के रूप में पिछड़े क्षेत्रों में बाल विवाह प्रथा का विद्यमान रहना प्रमुख है। विवाह होते ही लोग लड़की को विद्यालय भेजना बंद कर देते हैं। आर्थिक कारणवश भी गरीब परिवार अपने बच्चों को कुछ दिन तो पढ़ने भेजते हैं, किंतु 10–11 की उम्र होते–होते वह बालक उनके लिए कमाऊ पूत बन जाता है और वे उसका स्कूल जाना बंद करा देते हैं। सबसे प्रबल कारण विद्यालयों की व्यवस्था को बताया गया। इसमें सबसे प्रमुख अध्यापकों की अनुपस्थिति ही बताया गया। लोगों द्वारा स्पष्ट तौर पर कहा गया कि अध्यापिकाओं का बौद्धिक स्तर इस प्रकार का नहीं है कि वे बच्चों को ठीक से पढ़ा सकें। इसी कारण बहुत से संरक्षक अपनी बालिकाओं को कन्या विद्यालय न भेजकर बालकों के विद्यालय में भेजते हैं। विद्यालयों में भवनों की कमी भी पाई गई। जहां कहीं भी नए भवन बनाए जा रहे हैं, वे निर्धारित मानक के अनुसार नहीं बनाए गए हैं, जिससे अध्यापकों द्वारा विद्यालय में कोई भी सामान रखने में सदैव चोरी का भय बना रहता है। पर्यवेक्षण व्यवस्था लचर हो गई है। विश्व बैंक पोषित परियोजना के अंतर्गत एक नेटवर्क ब्लाक संसाधन केंद्र एवं न्याय पंचायत संसाधन केंद्र विकसित किया गया है, किंतु अभी तक इसके कार्यदायित्वों की रूपरेखा उभरकर सामने नहीं आ सकी है।

सरकारी प्राथमिक विद्यालयों की इस प्रकार की स्थिति में बहुत से गांवों में मांटेसरी स्कूल भी खुल रहे हैं, अतः अभिभावकों ने अपने बच्चों को उनमें अथवा बाहर के विद्यालयों में भेजना शुरू कर दिया है। यह कैसा विरोधाभास है कि कम वेतन पाने वाले मांटेसरी शिक्षक को अधिक वेतन पाने वाले अध्यापक से वरीयता दी जाती है। मांटेसरी शिक्षक पर प्रबंध समिति का कठोर नियंत्रण उसे सदैव कर्तव्य के प्रति सजग रखता है।

वर्तमान में प्रदेश में मिश्रित स्कूलों के साथ–साथ बालक एवं बालिकाओं के लिए, अलग–अलग प्राथमिक स्कूल भी स्थापित हैं। चयनित ऐसे ग्यारह गांव जिनमें बालक एवं बालिकाओं के लिए अलग–अलग जू.बे. स्कूल हैं, का विशेष रूप से अध्ययन किया गया। इनमें नामांकित बच्चों का विवरण तालिका 4 में दिया गया है।

तालिका 4

जूनियर बेसिक स्कूलों में बालक बालिकाओं का नामांकन

(वर्ष 1996–97)

विद्यालय	छात्रों की संख्या					प्रतिशत
	बालक	प्रतिशत	बालिका	प्रतिशत	योग्य	
प्रा.वि.–I (बालक)	1126	77	338	23	1464	100
प्रा.वि.–II (बालिका)	736	63	542	38	1278	100
योग	1862	68	880	32	2742	100

इस तालिका से यह संकेत मिलता है कि जब ग्राम स्तर पर बालक/बालिकाओं के स्कूलों में नामांकन में कोई प्रतिबंध या हिचक नहीं है, तो फिर दोहरे स्कूलों की आवश्यकता ही क्या है। यदि इन्हें एकीकृत कर दिया जाए, तो प्रशासनिक नियंत्रण में सुविधा होगी और वित्तीय व्यय में कमी आएगी। साथ ही महिला शिक्षकों को सामाजिक सुरक्षा भी मिल सकेगी। कहीं–कहीं पर कन्या विद्यालय ऐसे स्थान पर बनाए गए हैं, जहां अध्यापिकाओं में असुरक्षा की भावना विद्यमान थी। इसके अतिरिक्त अध्यापक विहीन विद्यालयों का अस्तित्व भी समाप्त हो जाएगा। चयनित क्षेत्र के दोहरे विद्यालयों वाले स्कूलों में 70 की स्वीकृत संख्या के विपरीत केवल 33 (46 प्रतिशत) अध्यापक ही कार्यरत थे। अध्यापिकाओं के 50 प्रतिशत पद रिक्त थे। दो विद्यालयों में वीक्षण के समय कोई अध्यापक कार्यरत नहीं था, परिणामतः उनमें ताला पड़ा हुआ था। लड़कियों की शिक्षा व्यवस्था ठीक करने के लिए पिछले प्रस्तरों में वर्णित समस्याओं पर सम्यक विचार कर निराकरण करना अत्यंत आवश्यक है। ❑

538केए/238, त्रिवेणी नगर–II
सीतापुर रोड, लखनऊ–226020

बिहार में पंचायतीराज और महिला भागीदारी

रामाज्ञा राय शशिधर

बिहार के बेगूसराय जिले में स्थानीय स्वशासन में महिला भागीदारी को लेकर एक दिलचस्प घटना घटी। एक स्थानीय पंचायत की कुछ महिलाओं ने विचार किया कि जवाहर रोजगार योजनांर्गत पंचायत में होने वाले विकास कार्यों में उनकी भी हिस्सेदारी हो और उन्हें भी मुखिया एवं पंचायत सेवक द्वारा आमसभा में अभिकर्ता निर्वाचित किया जाय। लेकिन इस मुद्दे पर पंचायत स्तरीय कार्यान्वयन समिति तैयार नहीं हुई। पंचायत सेवक, मुखिया एवं अभिकर्ताओं को पता चल गया था कि अभिकर्ता पद की मांग करने वाली महिलाओं का यह छोटा-सा संगठन जिला साक्षरता समिति से जुड़ा है और राजनीतिक स्तर पर जागरूक होने के कारण वे उनकी बंदरबांट में सम्मिलित नहीं होंगी।

पंचायत में सकारात्मक निर्णय होता नहीं देखकर महिलाओं के समूह ने प्रखंड पहुंचने का फैसला किया। प्रखंड में प्रखंड विकास पदाधिकारी ने भी महिलाओं को अभिकर्ता नहीं बनाने के कई कारण गिनाए। उन कारणों में प्रमुख थे – महिलाओं के पास भौतिक निर्माण का तजुर्बा नहीं होना, सामग्रियों की खरीद-बिक्री एवं स्थानीय झंझटों से जूझने में उनका सक्षम नहीं होना आदि। महिलाओं ने पंचायत से प्रखंड तक पंचायत विकास योजना में हिस्सेदारी के लिए कई प्रयास किए लेकिन हर बार वे असफल ही रहीं। अंत में दर्जनभर से अधिक महिलाओं ने अपने अधिकारों के लिए लड़ने का एक क्रांतिकारी तरीका ढूंढ निकाला। उन्होंने निर्णय किया कि छह-छह की संख्या में बंटकर वे प्रखंड विकास पदाधिकारी के निवास के दोनों दरवाजों पर बैठ जाएंगी। एक समूह विवाह गीत गाएगा और दूसरा मृत्यु एवं श्राद्ध के समय का रुदन गीत गाएगा। महिलाओं द्वारा पारंपरिक गीतों की यह अभिनव लोकयुक्ति इतनी सफल रही कि न केवल प्रखंड विकास पदाधिकारी, बल्कि उनके परिवार के अन्य सदस्य भी घबरा गए। उन्होंने प्रखंड विकास अधिकारी को समझाया कि नौकरी एवं कमाई का मतलब सुख-समृद्धि और शुभजीवन है, ऐसी नारकीय स्थिति नहीं।

इसके बाद प्रखंड विकास अधिकारी ने हस्तक्षेप किया। उनकी पहल पर आमसभा में महिलाओं को अभिकर्ता ही नहीं बनाया गया बल्कि उनके कार्य की सराहना भी हुई और किसी को एक पैसा घूस का भी नहीं मिला।

यह घटना इसलिए भी विचारणीय है कि बीमारू प्रदेश में स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की भागीदारी का यह अनूठा संघर्ष था।

दूसरी घटना पटना उच्च न्यायालय द्वारा बिहार सरकार को 73वें पंचायतीराज संशोधन अधिनियम के अंतर्गत 22 वर्षों से लंबित चुनाव कराए जाने के आदेश से पूर्व की है। यह घटना बिहार की पंचायतों में आए हुए ठहराव, विकास के अंतर्विरोध, पुरुषवादी वर्चस्व, प्रशासन में भ्रष्टाचार एवं महिलाओं के भीतर स्वशासन में भागीदारी जैसे मुद्दे की तरफ चिंतन करने को मजबूर करती है। बिहार सरकार द्वारा उच्च न्यायालय के निर्देश के बाद 3 फरवरी, 2002 को पंचायतीराज चुनाव की घोषणा करने तथा 6 चरणों में 11 से 30 अप्रैल के बीच 37 जिलों में त्रिस्तरीय पदों के लिए मतदान कराने तथा इसमें बड़ी संख्या में महिलाओं के चुने जाने के बाद महिलाओं की सामाजिक सक्रियता एवं भूमिका में उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई है।

बिहार के विभाजन के बाद हुए पंचायतीराज चुनाव में महिलाओं की भागीदारी की स्थिति पर एक नजर डालने के बाद उनकी भूमिका को जांचना–परखना थोड़ा आसान होगा। स्मरणीय है कि बिहार विभाजन के बाद 65 प्रतिशत आबादी बिहार में रही जबकि मात्र 35 प्रतिशत झारखंड के हिस्से में आई। दूसरी तरफ 67 प्रतिशत राजस्व स्रोत झारखंड में चले गए जबकि 33 प्रतिशत ही बिहार में बचे रहे।

बिहार के पंचायतीराज चुनाव 2001 की तालिका से स्पष्ट होता है कि 73वें संविधान संशोधन ने महिलाओं को स्थानीय स्वशासन में पहली बार सम्यक व समुचित आरक्षण देकर सामाजिक एवं जनतांत्रिक गतिशीलता को सबसे निचली सतह पर तीव्र किया है। वस्तुतः अप्रैल 1993 में पारित किए गए 73वें संविधान संशोधन का मकसद ही पंचायत स्तरीय अनियमित चुनाव पद्धति को समाप्त करना और पंचायतों को नागरिकों के प्रति पूर्ण जवाबदेह बनाते हुए उनमें महिलाओं एवं

तालिका
बिहार में 2001 में हुए पंचायतीराज चुनाव की स्थिति

		निर्वाचित कुल सदस्यों की संख्या	महिलाओं के लिए आरक्षित सीटें
ग्राम पंचायतों की संख्या	8,438	1,16,028 सदस्य 8,438 मुखिया	40,472
पंचायत समितियों की संख्या	529	11,611	3,954
जिला परिषदों की संख्या	37	1,162	398
कुल		**1,37,239**	**44,824**

स्रोत : सोसाइटी फार पार्टीसिपेटरी रिसर्च इन एशिया; सर्वेक्षण वर्ष : 2000–01

कमजोर वर्गों की उचित भागीदारी सुनिश्चित करना है। उल्लेखनीय है कि इस संविधान संशोधन के परिणामस्वरूप पहली बार बिहार के पंचायतीराज चुनावों में महिलाओं को लगभग 33 प्रतिशत स्थान मिला।

ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों एवं जिला परिषदों के त्रिस्तरीय स्वशासन के चुनाव में राज्य के 37 जिलों में कुल 1,37,239 सदस्य निर्वाचित हुए जिनमें महिला प्रतिनिधियों की संख्या 44,824 थी। राज्य की 8,438 ग्राम पंचायतों के लिए कुल निर्वाचित 1,16,028 सदस्यों में महिला सदस्यों की संख्या 40,472 थी। ग्राम पंचायत में वार्ड सदस्यों एवं पंचायत समिति के सदस्य के पद पर जहां आरक्षण की व्यवस्था थी, वहीं मुखिया के पद पर महिलाओं एवं कमजोर वर्गों को कोई आरक्षण नहीं मिला। इस कारण सामाजिक सत्ता एवं विकास में भागीदारी महिलाओं एवं कमजोर वर्गों के हाथों में समुचित ढंग से नहीं जा पाई, लेकिन इससे भविष्य की ओर उन्मुख एक दरवाजा तो खुल ही गया। राज्य के 37 जिलों में जिला परिषद सदस्यों की कुल संख्या 1,162 थी जिनमें 398 स्थानों से महिला प्रतिनिधि निर्वाचित हुईं। इसी तरह प्रखंड स्तर पर निर्मित 529 पंचायत समितियों के लिए कुल 11,611 प्रतिनिधियों में महिला प्रतिनिधियों की संख्या 3,454 थी।

इतनी बड़ी संख्या में पंचायतीराज चुनाव प्रक्रिया में महिलाओं के भाग लेने एवं पंचायतों, प्रखंडों और जिला स्तरीय स्वशासन में उनकी सक्रियता, अर्द्धसक्रियता एवं निष्क्रियता के कारणों की खोज करना भी दिलचस्प होगा। विगत पंचायतीराज चुनाव के सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि जिन जिलों में साक्षरता अभियान तीव्र चला और उनमें महिलाओं की सक्रिय भागीदारी रही, वहां चुनाव में एवं उसके बाद स्थानीय स्वशासन में महिला प्रतिनिधियों की जबर्दस्त भूमिका रही है। उदाहरण के लिए बेगूसराय जिले को लिया जा सकता है। यहां जिला परिषद में साक्षरता से जुड़ी छह महिला प्रतिनिधियों ने चुनाव में जीत हासिल की। इनमें से तीन अनारक्षित स्थानों से जीतीं। उषा देवी जो एक दलित महिला हैं, बेगूसराय साक्षरता समिति के महत्वपूर्ण पद पर रहीं और आज जिला परिषद की उपाध्यक्ष हैं। बिहार जैसे अल्पसाक्षर, सामंती संरचना वाले और भौतिक विकास के क्षेत्र में पिछड़े राज्य में पंचायतीराज चुनाव में महिलाओं का पार्षद पदों पर अनारक्षित चुना जाना यहां की महिला जागरूकता का नए सिरे से मूल्यांकन के लिए मजबूर करता है। जिन जिलों में साक्षरता दर अधिक रही, महिला साक्षरता की तुलनात्मक स्थिति सुदृढ़ रही एवं सामाजिक संघर्ष तीव्र रहा है, वहां स्थानीय स्वशासन के प्रति सक्रिय एवं राजनीतिक दृष्टि से सचेत महिलाओं की ज्यादा हिस्सेदारी हुई है। जहां निरक्षरता अधिक है या सामंती जकड़न ज्यादा मजबूत है, वहां पुरुषवादी समाज ने हथकंडे के रूप में महिलाओं का चुनावी प्रयोग किया है।

स्थानीय स्वशासन में महिला प्रतिनिधियों की अर्द्धसक्रियता एवं निष्क्रियता के कई कारण हैं। बिहार का समाज, खासकर ग्रामीण समाज, स्वाधीनता के 55 वर्षों बाद भी आधुनिक नहीं हो पाया है। भूमि समस्या जहां महिलाओं एवं कमजोर वर्गों के शोषण की आधारशिला है वहीं इस राज्य का औद्योगिक दृष्टि से अति पिछड़ा होना भी इस समस्या का मूलाधार है। आबादी के हिसाब से कृषि योग्य भूमि नहीं होने से बेरोजगार नौजवानों एवं उनकी महिलाओं का पलायन जारी है। उत्तर बिहार में अनेक ऐसी पंचायतें मिल जाएंगी जहां घरों में केवल महिलाएं, बच्चे और बूढ़े हैं। मर्दों का बड़ा हिस्सा रोजी–रोटी की जुगाड़ में दिल्ली जैसे महानगरों और पंजाब जैसे समृद्ध राज्यों की ओर चला गया है। इसके अतिरिक्त, महिला साक्षरता की नाजुक स्थिति तथा समाज एवं सत्ता का अपराधीकरण भी स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की भागीदारी या भागीदारी के बावजूद उनकी सक्रियता को रोकता है।

सबसे पहले ग्राम पंचायतों में महिला प्रतिनिधियों की भूमिकाओं एवं समस्याओं पर विचार किया जाना चाहिए। इन्हीं भूमिकाओं की सफलता–असफलता से उनकी समस्याओं और चुनौतियों का भी पता चलता है। पंचायत स्तर पर महिलाओं को वार्ड सदस्यों के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण मिला है। इस तरह ग्राम पंचायत समिति में एक तिहाई महिलाएं आई हैं। किसी भी योजना एवं कार्यक्रम को पारित करने में चूंकि आधे से अधिक मत की जरूरत पड़ती है, इसलिए क्रांतिकारी परिवर्तन वाले मुद्दों का पारित होना प्रायः असंभव हो जाता है। दूसरी बात, मुखिया (प्रधान) का पद अनारक्षित होने से बिहार में महिला मुखिया लगभग नहीं के बराबर हैं। मुखिया का पद चूंकि सामाजिक दृष्टि से काफी प्रभावी होता है इसलिए पुरुष वर्चस्व वाले समाज में महिलाओं की मांगों का तुरंत सफल होना कठिन होता है। तीसरी समस्या यह है कि वार्ड से चुनी गई महिलाएं अधिकांशतः घरेलू, कामकाजी और अल्पसाक्षर होती हैं। जो महिला सदस्य थोड़ी जागरूक व सक्रिय होती हैं वे पंचायत के कार्यों में, खासकर वृद्धावस्था पेंशन, विधवा पेंशन, राशनिंग तथा महिला विकास से जुड़ी योजनाओं में बढ़–चढ़कर भूमिका निभाती हैं। लेकिन ऐसा भी मामला सामने आया है कि अंगूठा छाप या मात्र हस्ताक्षर करने वाली महिला सदस्य अपने पति के सामाजिक वर्चस्व के कारण जीत तो गईं लेकिन उसके बाद उसका पति ही अपने हित एवं दिमाग के हिसाब से उसके पद का इस्तेमाल करता है। इसलिए पंचायतों में महिला शिक्षा, राजनीतिक जागरूकता, महिला अधिकार

बिहार जैसे अल्पसाक्षर, सामंती संरचना वाले और भौतिक विकास के क्षेत्र में पिछड़े राज्य में पंचायतीराज चुनाव में महिलाओं का पार्षद पदों पर अनारक्षित चुना जाना यहां की महिला जागरूकता के बारे में नए सिरे से मूल्यांकन के लिए मजबूर करता है। जिन जिलों में साक्षरता दर अधिक रही, वहां महिला साक्षरता की तुलनात्मक स्थिति सुदृढ़ रही एवं सामाजिक संघर्ष तीव्र रहा है, वहां स्थानीय स्वशासन के प्रति सक्रिय एवं राजनीतिक दृष्टि से सचेत महिलाओं की ज्यादा हिस्सेदारी हुई है। जहां निरक्षरता अधिक है या सामंती जकड़न ज्यादा मजबूत है, वहां पुरुषवादी समाज ने हथकंडे के रूप में महिलाओं का चुनावी प्रयोग किया है।

और दहेज प्रथा पर पूर्ण व्यावहारिक प्रतिबंध एवं महिलाओं को टिकाऊ रोजगार उपलब्ध कराए बिना उनके पूर्ण सशक्तीकरण का सपना पूरा नहीं हो सकता। लेकिन यह भी सच है कि महिलाओं की उपर्युक्त समस्याओं के समाधान में पंचायतीराज की अहम भूमिका होगी।

किंतु बिहार जैसे राज्य में महिलाओं का पंचायती व्यवस्था में सक्रिय होना आग के दरिया में कूद पड़ने जैसा है। फिर भी वे जनतांत्रिक व्यवस्था के इस सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्तर पर चुनौतियों और समस्याओं को स्वीकार कर आगे बढ़ रही हैं।

ग्राम पंचायतों से ज्यादा संघर्ष महिलाओं को प्रखंड स्तरीय पंचायत समिति एवं जिला स्तरीय जिला परिषद में करना पड़ता है। ग्राम पंचायत में पंचायत समिति के लिए निर्वाचित महिला सदस्य मुखिया और प्रमुख दोनों की आंखों की किरकिरी बन जाती हैं। इसका कारण उनका अधिकार क्षेत्र है। वस्तुतः पंचायत समिति सदस्य को प्रखंड एवं ग्राम पंचायत के बीच महत्वपूर्ण कड़ी बनाया गया है। प्रखंड स्तरीय कार्य में उनकी महत्वपूर्ण दखल होती है। परिणामतः कोई भी पुरुष मुखिया इस प्रकार के दखल को बर्दाश्त नहीं कर पाता कि उसकी योजनाओं पर किसी महिला सदस्य का अंकुश हो। दूसरी ओर, प्रखंड स्तर पर महिलाओं के अधिकार बढ़ाए जाने के कारण पंचायत समिति सदस्यों, प्रमुख एवं प्रखंड विकास पदाधिकारी तीनों से उसे रचनात्मक एवं वैचारिक संघर्ष करना पड़ता है। इससे भी अधिक चुनौतीपूर्ण कठिनाई यह है कि उसे प्रखंड तक जाने एवं जनता के बीच अधिक समय देने के कारण पारिवारिक प्रताड़ना का शिकार होना पड़ता है। जहां प्रताड़ना नहीं, वहां भी पारिवारिक कार्य छूटते–बिखरते रहते हैं। इसके अतिरिक्त स्थानीय ठेकेदार, भ्रष्ट कर्मचारी तथा वर्षों से भ्रष्टाचार का जाल फैलाए पेशेवर दलाल भी कई तरह की परेशानियां उत्पन्न करते हैं।

महिला जिला पार्षदों की भागीदारी से स्थानीय स्वशासन के अधिकार, समायोजन एवं लोकतंत्रीकरण में महत्वपूर्ण बदलाव आ रहा है। निश्चित रूप से ये महिलाएं शिक्षित, संघर्षशील, प्रखर व्यक्तित्व वाली एवं जनोन्मुख होती हैं।

गांधीजी कहते थे कि भारत की आत्मा गांवों में बसती है। लेकिन हमारे समय की मशहूर लेखिका अरुंधति राय का वक्तव्य है कि भारत की आत्मा गांवों में मरती है। बिहार जैसे राज्य के गांवों में मरती हुई भारत की आत्मा को जीवित करने का काम महिलाएं और कमजोर तबके के लोग ही कर सकते हैं। स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी और जागरूकता से इस बात की उम्मीद मजबूत होती है। ❑

उपसंपादक : *समयांतर*
137–ई, ब्रह्मपुत्र छात्रावास
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली–110067

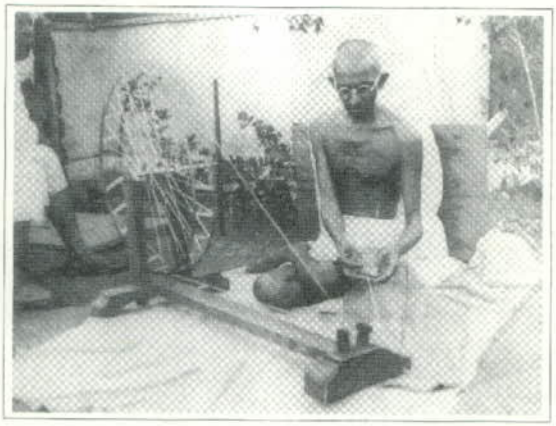

आज है धर्मनिरपेक्षता की 133 वीं जयंती।

आज है अहिंसा की 133 वीं जयंती।

आज है निःस्वार्थता की 133 वीं जयंती।

आज है आत्मनिर्भरता की 133 वीं जयंती।

आज है सत्याग्रह की 133 वीं जयंती।

आईए **राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी** को उनके 133 वें जन्म दिवस के अवसर पर याद करते हुए हम उनके उन सिद्धान्तों को न भूलें जिनके लिए वे जिये और मरे।

मेरी दिल्ली
मैं ही संवारूं

दिल्ली
सरकार

भागीदारी

मध्य प्रदेश पंचायतीराज में महिला प्रतिनिधियों का सबलीकरण

डा. डी. वर्मा

महिलाओं को पंचायती व्यवस्था का समुचित ज्ञान हो सके, जिससे पंचायतों के कार्यों को सही रूप से क्रियान्वित कर सकें। इसके लिए प्रदेश में किए जा रहे प्रयास सराहनीय हैं। गांधीजी का पंचायतीराज का सपना पूरी तरह तभी साकार हो सकेगा, जब गांव के सभी निवासियों को गांव के विकास के लिए किए जा रहे कार्यों में बराबर मौका मिले। महिलाओं को भी अब गांव के विकास के लिए किए जा रहे कार्यों से पूरी तरह जुड़ना होगा।

किसी भी समाज के सर्वोन्मुखी विकास के लिए आवश्यक है, महिलाओं की समान भागीदारी। समाज में महिलाओं की जनसंख्या कुल आबादी की लगभग आधी (48.10 प्रतिशत) है। भारत सरकार ने महिलाओं को विकास पथ पर लाने के लिए हर क्षेत्र में भरपूर प्रयास किए हैं, चाहे वह क्षेत्र शिक्षा का हो, स्वास्थ्य का या प्रतिनिधित्व का हो। प्रतिनिधित्व देने का जीता-जागता उदाहरण है पंचायतीराज।

देश में 73वें संविधान संशोधन के उपरांत और मध्य प्रदेश में पंचायतीराज अधिनियम लागू किए जाने के पश्चात त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण दिए जाने के साथ ही बड़ी संख्या में महिलाओं ने प्रतिनिधित्व संभाला है।

महिलाओं को पंचायती व्यवस्था का समुचित ज्ञान हो सके, जिससे पंचायतों के कार्यों को सही रूप से क्रियान्वित कर सकें। इसके लिए प्रदेश में किए जा रहे प्रयास सराहनीय हैं। *ओजस्विनी* योजना का तो मूल उद्देश्य ही यही है। *ओजस्विनी* योजना के अंतर्गत आयोजित की जा रही कार्यशालाओं में महिला पंचायत पदाधिकारियों को पंचायतीराज व्यवस्था एवं शासन की कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी, पंचायतों को विभिन्न विभागों द्वारा प्रत्यायोजित अधिकार एवं उनके कर्तव्यों का ज्ञान कराया जा रहा है। इस प्रशिक्षण के तरीके का चयन सुरुचिपूर्ण तथा सरलीकृत ढंग से किया है, स्थानीय भाषा में कहानी एवं गीतों और संवादों के माध्यम से उनको समझाया जाता है।

पंचायतीराज व्यवस्था का सबसे बड़ा लक्ष्य है गांव का सामाजिक एवं आर्थिक विकास। खासकर गरीबों और पिछड़े लोगों की माली हालत में सुधार एवं समाज में उनकी दशा को बेहतर बनाना। रोटी, कपड़ा और मकान की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ ही सभी के लिए पीने का साफ पानी, रहने के लिए साफ-सुथरा स्थान, आसपास में डाक्टर एवं दवाई की सुविधा, बच्चों की पढ़ाई के लिए शाला और शिक्षक तथा गांव में बिजली और सड़क – यह सुविधाएं तो सबके लिए उपलब्ध होनी ही चाहिए, ताकि जीवन का न्यूनतम अपेक्षित स्तर सभी को मिल सके। इसीलिए त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था में इन आवश्यकताओं से संबंधित समस्त अधिकार विभिन्न स्तरों की पंचायतों को सौंप दिए गए हैं। 26 जनवरी, 2001 से प्रारंभ की गई ग्राम स्वराज व्यवस्था इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण सोपान है। यह आवश्यक हो जाता है कि पंचायतीराज प्रतिनिधि पंचायत के क्रियाकलापों, अधिकारों एवं कर्तव्यों को ठीक से समझकर उनमें भागीदारी निभाएं। साथ ही जल संरक्षण तथा संवर्धन, शिक्षा स्तर में वृद्धि तथा स्वास्थ्य कार्यक्रमों के आयामों में योगदान दें।

ग्राम स्वराज

प्रदेश में ग्राम स्वराज की स्थापना का मकसद आज की पंचायत व्यवस्था और परंपरा से चली आ रही पंचायत प्रणाली के बीच तालमेल स्थापित करना है। ताकि दोनों के दोषों को दूर किया जा सके, और गुणों को अपनाया जा सके। लोकतंत्र पंचायतों तक आकर ही न रुक जाए बल्कि असली ताकत ग्रामसभा के जरिये गांव वालों के हाथ में हो और वे अपने आपको राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक क्षेत्र में मजबूत बनाकर अपना विकास खुद कर सकें। ग्राम स्वराज सरकार पर गांवों की निर्भरता को कम करेगा और गांव वाले अपनी मेहनत से अपनी माली हालत सुधारेंगे।

ग्राम स्वराज की स्थापना से पंचायतें गांव के लोगों के बीच और अधिक विश्वास के साथ काम कर सकेंगी और उनके काम में पारदर्शिता आएगी।

ग्रामसभा

गांवों के सर्वांगीण विकास के लिए ग्रामसभाओं को सशक्त करने हेतु ग्राम स्वराज लागू किया गया है। इसका मतलब है गांव की सामुदायिक भावना को बढ़ाना एवं बातचीत, सहमति और समझौते के जरिये समस्याओं का निराकरण करना। ग्रामसभा सर्वोपरि है, इस अवधारणा को और अधिक मजबूत करने के लिए ग्रामसभा को व्यापक अधिकार दिए गए हैं, ताकि ग्रामसभा अपने निर्णयों का क्रियान्वयन अपनी ही समिति के माध्यम से अपने ढंग से कर सके।

ग्रामसभा की निम्न समितियां होंगी:

1. ग्राम विकास, 2. सार्वजनिक संपदा समिति, 3. कृषि समिति, 4. स्वास्थ्य समिति, 5. ग्राम रक्षा समिति, 6. अधोसंरचना समिति, 7. शिक्षा समिति, 8. सामाजिक न्याय समिति।

प्रत्येक ग्रामसभा ग्रामकोष नाम की निधि स्थापित करेगी जिसके चार भाग होंगे: 1. अन्न कोष, 2. श्रम कोष, 3. वस्तु कोष, 4. नगद कोष। ग्राम कोष में अन्य स्रोतों से आय होने के अलावा दान में मिला रुपया और वस्तुएं शमिल होंगे। इसी के साथ भू–राजस्व, उपकर, चराई फीस और शाला भवन उपकर के पैसे भी जमा होंगे। इसके अलावा ग्रामसभा द्वारा लगाए गए कर तथा केन्द्र और राज्य सरकार से प्राप्त राशि भी होगी।

पंचायतीराज अधिनियम के अंतर्गत ध्यान देने योग्य बातें

अनेकानेक महिला जनप्रतिनिधियों के साक्षर न होने अथवा बैठकों में भाग लिए बगैर कार्यवाही विवरण पर हस्ताक्षर कर देने से इस बात की संभावनाएं बनती हैं कि वे किसी भी प्रकार से कोई गलत कार्य कर बैठें। पंचायत अधिनियम, 1993 की धारा 40 के अंतर्गत ऐसे पदाधिकारियों को पद से हटाए जाने के प्रावधान हैं। धारा 86 के अंतर्गत यदि पंचायत का कोई पंच या सेवक पंचायत के किसी ऐसे धन या संपत्ति के नुकसान का दोषी हो जो कि उसके कर्तव्य के प्रति अवचार या घोर उपेक्षा के कारण हुआ हो तो उससे उक्त राशि वसूली की जा सकेगी तथा पंचायतीराज अधिनियम की धारा 92 के अंतर्गत ऐसे धन या वस्तु की वसूली के निमित्त एक माह की जेल, अर्थदंड तथा आगामी छह वर्ष के लिए पंचायत चुनाव लड़ने पर प्रतिबंध का भी प्रावधान किया गया है। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि पंचायत पदाधिकारी यदि साक्षर नहीं हों तो वे पंचायत संबंधी किसी भी कागजात पर हस्ताक्षर करने या अंगूठा लगाने से पहले किसी विश्वसनीय व्यक्ति से पंचायत की बैठक में ही अन्य व्यक्तियों के समक्ष उसे पढ़वाकर सुनें और समझ लें।

महिलाओं के लिए कुछ जरूरी कानून

महिला जनप्रतिनिधि के रूप में यह आवश्यक है कि आप कुछ ऐसे कानूनों का ध्यान रखें जो महिलाओं को सामाजिक रूप से सशक्त कर सकें। ऐसे कुछ उल्लेखनीय कानून इस प्रकार हैं:

समान पारिश्रमिक कानून, 1976 : स्त्री और पुरुष को एक जैसा काम करने पर एक सी मजदूरी दी जाएगी। कम मजदूरी देने वाले की शिकायत श्रम अधिकारी से करने पर दोषी को 6 माह की सजा और 5 से 10 हजार रुपये तक जुर्माना हो सकता है।

हिंदू उत्तराधिकार नियम, 1956 : हर स्त्री को अपने नाम से जायदाद खरीदने, लेने, देने और वसीयत करने का अधिकार है। विधवा स्त्री अपने पति की जायदाद की पूरी तरह मालिक होगी। जब कोई आदमी बिना वसीयत किए मर जाता है तब विधवा को घर में रहने का अधिकार होगा। शादीशुदा महिला को दहेज या दान में मिली जायदाद उसका स्त्रीधन होगा और सिर्फ वही उसे खर्च कर सकेगी, या बेच सकेगी।

बाल–विवाह अपराध नियम, 1926–86 : 21 साल के कम उम्र के लड़के और 18 साल से कम उम्र की लड़की की शादी करना जुर्म है। समय रहते शिकायत मिलने पर पुलिस ऐसे विवाह रोकने की कार्यवाही करेगी।

भारतीय दंड संहिता, 1872 : किसी भी महिला के साथ छेड़छाड़ करने, भद्दी बातें कहने, इशारे करना या बेइज्जती करने पर दोषी को दो साल तक की सजा हो सकती है, और जुर्माना भी हो सकता है।

न्यूनतम मजदूरी कानून, 1948 : सरकार ने सड़क, बीड़ी, कपड़े बनाने, दिहाड़ी पर काम करने और खेती का काम करने के लिए मजदूरी की जो दर तय की है, उससे कम मजदूरी नहीं होगी।

कर्मकार प्रतिकर नियम, 1923 : यदि किसी मजदूर को काम के दौरान चोट लग जाती है, या छूत की बीमारी लग जाती है तो उसे मालिक से मुआवजा मिलेगा। मालिक से दो साल के भीतर मुआवजा न मिलने पर श्रम आयुक्त से शिकायत की जा सकती है।

ठेका श्रम कानून, 1970 : गांव के जो लोग ठेकेदार के मार्फत काम करने के लिए अपने गांव से बाहर जाते हैं, उनके रहने, सोने, बच्चों को खेलने और महिलाओं के रहने का इंतजाम ठेकेदार द्वारा किया जाएगा। ठेकेदार ऐसे श्रमिकों को पूरा वेतन देने के लिए बाध्य होगा, और इसका भुगतान नगद करना होगा।

बंधुआ मजदूरी कानून, 1975 : यदि व्यक्ति पर कर्ज है या उसकी जायदाद गिरवी रखी है तो बिना मजदूरी दिए उस व्यक्ति से काम कराना या उसे बंधुआ रखना जुर्म है।

महिला थाना : महिलाओं की आसानी के लिए सभी बड़े शहरों में महिला थाना बनाए गए हैं। अगर आम थाने में मदद न मिले तो महिला किसी महिला थाने में अपनी शिकायत दर्ज करवा सकती है। अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिए हर जिले में अलग से थाने बनाए गए हैं।

गांधीजी का पंचायतीराज का सपना पूरी तरह तभी साकार हो सकेगा, जब गांव के सभी निवासियों को गांव के विकास के लिए किए जा रहे कार्यों में बराबर मौका मिले। महिलाओं को भी अब गांव के विकास के लिए किए जा रहे कार्यों से पूरी तरह जुड़ना होगा। आज आवश्यकता इस बात की है कि *ओजस्विनी* जैसी योजनाओं के माध्यम से महिलाओं को उनके अधिकारों का ज्ञान सुगमता से कराया जाए और पंचायतीराज में उनके लिए किए गए प्रावधानों का लाभ उन तक पहुंचाया जाए। ❑

6, पुलिस पेट्रोल पंप के पीछे, (पीएवक्यू)
जहांगीराबाद, भोपाल (मप्र)

गरीबी उन्मूलन में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका

डा. जदुनाथ प्रसाद वर्मा

ग्रामीण महिलाएं सदियों से गरीबी, अज्ञानता, अंधविश्वास, एवं घुटनभरी परपंराओं तथा रीति–रिवाजों के वातावरण में मजबूरी भरा जीवन जीती आई हैं। सामाजिक बंधनों, आर्थिक विपन्नता, शोषण तथा उत्पीड़न भरी उपेक्षा के बावजूद महिलाएं त्याग की अप्रतिम मूर्ति रहीं हैं और बाल–बच्चों, घर–परिवार समस्त समाज–समुदाय के हित, कल्याण के लिए चुपचाप बलिदान देती रही हैं जबकि जीवन के हर क्षेत्र में महिलाएं पुरुषों के मुकाबले ज्यादा जिम्मेदारी से अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करती हैं।

पशुपालन, मछलीपालन और गांव के दूसरे काम–धंधों में महिलाओं का योगदान पुरुषों से कहीं ज्यादा है लेकिन सामाजिक पूर्वाग्रहों, निरक्षरता और उनमें संगठित न होने की वजह से उनकी लगातार उपेक्षा की जाती रही है। यह सोचा जाता था कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लाभ गांवों में पहुंचने से वहां की महिलाओं के जीवनस्तर में सुधार आएगा लेकिन ऐसा नहीं हो पाया है क्योंकि कृषि क्षेत्र में ही ये लाभ उन्हें नहीं मिल पा रहे हैं।

आवश्यकता

भारत की जनसंख्या तकरीबन 105 करोड़ है। मानव संसाधन मंत्रालय (सितंबर 2001) के अनुसार साक्षरता की दर 1951 में 18.3

प्रतिशत थी, जो अब 2001 में बढ़कर 65.4 प्रतिशत हो गई है। पुरुषों की तीन चौथाई जनसंख्या लिख–पढ़ सकती है परंतु महिलाओं की केवल आधी संख्या ही साक्षर है। पुरुषों के मुकाबले महिला श्रमिकों की संख्या भी काफी तेजी से बढ़ रही है।

तालिका 1

कृषि मजदूरी के आधार पर पुरुष–महिला श्रमिकों की संख्या

(प्रतिशत में)

वर्ष	1961	1971	1981	1991
महिला	27.7	54.4	47.7	58.2
पुरुष	18.1	25.0	24.3	23.1

तालिका 2

कार्य में लगी महिलाओं की संख्या

(प्रतिशत में)

महिलाएं	ग्रामीण क्षेत्र	शहरी क्षेत्र
प्रशिक्षित	10.31	30.52
अप्रशिक्षित	89.69	69.48

किसी भी समाज की तस्वीर बदलने में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान होता है। महिला की आयु, परिवार में उपलब्ध कुल कृषि योग्य भूमि और शिक्षा आदि कृषि में उनकी भागीदारी को प्रभावित करती हैं। सामाजिक तथा आर्थिक विकास के लिए महिलाओं को अधिकारसंपन्न बनाना एवं उन्हें राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में लाना बहुत जरूरी है। ग्रामीण महिला एक अवैतनिक कर्मचारी की तरह समझी जाती रही है जिसकी मेहनत और काम को आर्थिक नजरिये से कभी नहीं देखा गया। अतः उनकी अर्थोपार्जन की क्षमता को बढ़ाने की आवश्यकता है।

भारत में 11 करोड़ से ज्यादा बालिकाएं हैं जिनमें तीन करोड़ गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों से संबद्ध हैं। कृषि कार्य में लगी किशोरियों में 40 प्रतिशत वयस्क होने से पहले ही विवाहित हो जाती हैं। अनुचित लालन–पालन, खानपान के फलस्वरूप 90 प्रतिशत किशोरियां रक्तहीनता की शिकार होने के कारण कृषि कार्य में पूरी क्षमता के साथ योगदान नहीं दे पाती हैं।

समस्या

सीमित कृषियोग्य भूमि, असमय और अपर्याप्त वर्षा, सिंचाई के साधनों की कमी, उन्नत किस्म के बीजों तथा रासायनिक खादों तथा बिजली का समय पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होना, परिवार में आर्थिक तंगी, बैंकों से ऋण मिलने की लंबी एवं जटिल प्रक्रिया, गैरसरकारी ऋणदायी संस्थाओं की ऊंची ब्याज दरें एवं बिचौलियों द्वारा धोखाधड़ी आदि महिलाओं के आर्थिक विकास के रास्ते में आने वाली गंभीर समस्याएं हैं। इनके अतिरिक्त पुरुषों की तुलना में महिलाएं उत्पादन कार्यों में कम सहयोग कर पाती हैं, क्योंकि उन्हें जानकारी की कमी, तकनीकी ज्ञान का अभाव घरेलू कार्यों में लगे रहने के कारण खेती के लिए पर्याप्त समय का अभाव, शिक्षा की कमी के कारण तकनीकी ज्ञान समझने में दिक्कत और आवास प्रबंधन में दिक्कतों का सामना करना पड़ता है।

उन्नत कृषि तकनीकी एवं जानकारी उनकी जरूरत के मुताबिक और व्यावहारिक होते हुए भी उन तक समय से नहीं पहुंच पाना, उन्नत कृषि उपकरणों की उपयोगिता से अवगत न होना, आधुनिक कृषि उपकरणों का उपलब्ध न होना, तकनीकों का किसान की परिस्थितियों के अनुकूल न होना आदि कृषकों द्वारा तकनीकों की अस्वीकार्यता के प्रमुख कारण हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों के परिणाम तभी फलदायी होंगे जब अनुसंधानों द्वारा विकसित तकनीकों को कृषकों द्वारा अपनाने पर उनको इसका पूरा फायदा मिल सकेगा। इसके लिए आवश्यक है कि खोज की गई तकनीकें किसानों की आर्थिक, सामाजिक, जैव भौतिक तथा कृषि परिस्थितियों के अनुकूल हों।

प्रशिक्षण क्षेत्र

विश्वभर में संपादित किए जाने वाले कुल कार्य का लगभग 50–90 प्रतिशत भाग महिलाओं द्वारा किया जाता है एवं विश्व के 44 प्रतिशत खाद्य का उत्पादन महिलाएं ही करती हैं। अतः यह आवश्यक है कि प्रशिक्षण का आधार कृषि में महिलाओं का योगदान बने। पर्यावरण, ऊर्जा संरक्षण, आमदनी वृद्धि के स्रोत, आवास प्रबंधन, रेशम पालन, मछलीपालन, बागवानी, मधुपालन, स्वरोजगार योजनाओं के क्षेत्र में महिलाओं के प्रशिक्षण की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। समन्वित कीट ब्याधि नियंत्रण की आधुनिक तकनीकी ज्ञान, अनाज भंडारण का ज्ञान, वैकल्पिक ऊर्जा, प्रदूषण, जैव गैस संयंत्र, फलों एवं सब्जियों का परिरक्षण, पशुधन उत्पादन, पौधा संरक्षण, जैविकखाद का उपयोग जैसे विषयों पर समय–समय पर प्रशिक्षण आयोजित करने से महिलाओं के आधुनिक तकनीकी ज्ञान में वृद्धि होगी, साथ ही खाद्य उत्पादन भी बढ़ेगा। इसके लिए आवश्यक है तकनीकी का समुचित प्रसार।

आज के बदलते परिवेश में जहां कृषि कार्य में उच्च तकनीक और वैज्ञानिक ज्ञान का प्रचार–प्रसार एवं कार्यान्वयन जरूरी हो गया है वहीं उच्च स्तर के मानव संसाधन की भी जरूरत है ताकि विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से विश्व बाजार में अपने उत्पादन की गुणवत्ता के आधार पर एक स्थान एवं पहचान बनाई जा सके।

तकनीकी प्रसार का शुभ संकल्प लिए हम जिस राह पर चले हैं वह लंबी और थकाने वाली है। गरीबी उन्मूलन के लिए अब तक जो प्रयास हमारे देश में किए गए हैं उनमें सबसे अधिक बाधा संसाधनों की कमी, राजनैतिक एवं सामाजिक स्तर पर पर्याप्त इच्छाशक्ति के अभाव के कारण पड़ी है। बस जरूरत है प्रबल इच्छा शक्ति एवं कठिन परिश्रम की। जब हम जन–जन को जोड़कर जनांदोलन शुरू करेंगे तभी तकनीकी प्रसार का उद्घोष गांव–गांव ढाणी–ढाणी में गूंजेगा। ❑

प्रशिक्षण सहयोगी–टी–9
कृषि विज्ञान केंद्र (सीफा, भाकृअनुप)
पोः कौशल्यागंग, भुवनेश्वर–751002

विकास की धारा के साथ ग्रामीण महिलाएं

ममता भारती

पिछले पचास वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों का तीव्र विकास हुआ है। सरकारी योजनाओं में ग्रामीण जन की सहभागिता की दृष्टि से हमारी आधी आबादी की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। मार्च 2001 में संपन्न जनगणना के मुताबिक हमारे देश की आबादी 102.70 करोड़ हो चुकी है। इसमें से 58.13 करोड़ पुरुष तथा 49.57 करोड़ स्त्रियां थीं। भारत में स्त्री पुरुष अनुपात के ताजा आंकड़ों से हमारे समाज में स्त्री और पुरुषों के बीच लगभग बराबरी का संकेत मिलता है। प्रत्येक एक हजार पुरुषों के अनुपात में स्त्रियों की संख्या अब 933 है।

आगे बढ़ी हैं ग्रामीण महिलाएं

देश में संपूर्ण ग्रामीण विकास का सपना तभी पूरा हो सकता है जबकि ग्रामवासी आर्थिक दृष्टि से संपन्न, सुशिक्षित और पिछड़ेपन से मुक्त हों। साथ ही साथ ग्रामीण महिलाओं की भी भागीदारी विकास की पूरी प्रक्रिया में बराबर की हो। इस दृष्टि से केंद्र और राज्य की सरकारें ग्रामीण विकास के लिए कृत संकल्प हैं। उनमें भी महिलाओं का पूरा ध्यान रखा जाता है। पंचायतीराज में उनके दायित्व तथा उनके अधिकार आदि सब हमारी विकास यात्रा के हिस्से हैं। ग्रामीण महिलाओं की दशा सुधारने के जो प्रयास हुए हैं उन्हीं का सुफल है कि तरक्की की राह पर अब केवल शहरी महिलाएं ही नहीं हैं बल्कि ग्रामीण महिलाएं भी प्रगति के पथ पर अग्रसर हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार के अवसरों, शिक्षा और जागृति की लहर ने महिलाओं को भी गहरे तक प्रभावित किया है। उसी का नतीजा है कि महिला डेयरी परियोजना– आंगनबाड़ी कार्यक्रम तथा महिला मंगल दल आदि के माध्यम से नया इतिहास रचा जा रहा है पुरानी मान्यताओं जैसे पर्दाप्रथा, बालविवाह और अंधविश्वासों का अंधेरा दूर हो रहा है। विकास का नया प्रकाश उन कोनों को भी आलोकित कर रहा है जहां रोशनी की किरण नहीं पहुंच पाती थी। अनेक स्व–सहायता समूह तथा गैरसरकारी संगठन इस उजाले को आगे बढ़ाने का काम कर रहे हैं।

ग्रामीण महिलाओं की प्रगति एक सफर है मंजिल नहीं। इसलिए ग्रामीण महिलाओं के उत्थान की इस पावन परंपरा को अभी और भी आगे बढ़ाना है। तभी स्वस्थ समाज और मजबूत राष्ट्र का सवप्न साकार हो सकेगा।

वस्तुतः स्त्री ही परिवार की धुरी होती है। वह दिशा प्रदान करती है। इसलिए उसका

शिक्षित और समझदार होना बहुत जरूरी होता है। यह बात अब ग्रामीण क्षेत्रों में आम लोगों की समझ में भी आने लगी है। अतः बालिका शिक्षा की दिशा में प्रगति हो रही है। स्त्री शिक्षा विकास की पहली सीढ़ी होती है अतः इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती।

बेहतर कार्य शैली से सुधार

स्त्री जीवन की जटिलताएं तो वैसे ही कुछ कम नहीं होतीं। इसलिए यह जरूरी है कि उन्हें सुलझाने की दिशा में सदा सजग, सक्रिय और सचेष्ट रहा जाए। सबलीकरण के लिए खुद प्रयास किए जाएं। जुझारू महिलाओं की सफलताएं दूसरों के लिए भी प्रेरणा और प्रोत्साहन सिद्ध हो सकती हैं। ग्रामीण महिलाएं किसी से पीछे नहीं हैं। घर की देहरी से खेत और खलिहानों तक उनके परिश्रम को नकारा नहीं जा सकता। वे भी अपने मोर्चे पर डटी नजर आती हैं।

नित नए अनुसंधान और विकास की धारा देश में बह रही है। विज्ञान और तकनीकी ने ग्रामीण जन–जीवन को भी प्रभावित किया है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि देश में जहां एक ओर हरित क्रांति जैसे बड़े बदलाव आए हैं वहीं ग्रामीण जीवन के कष्ट भी कम हुए हैं। कार्यकुशलता और कार्यक्षमता में वृद्धि हुई है। कम समय और कम परिश्रम से अधिक काम करना संभव हुआ है। ग्रामीण महिलाओं ने भी इन परिवर्तनकारी गतिविधियों को तेजी से अपनाया और जमाने के साथ कदम से कदम मिलाकर अपना पिछड़ापन दूर किया है। अपनी जीवन शैली और कार्य शैली को बदला है। यह भी सबलीकरण की दिशा में उठा एक कदम है।

स्थिति में सुधार

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के निर्देशन में ग्रामीण बैंकिग के क्षेत्र में महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु अनेक कदम उठाए गए हैं। उद्यमिता के विकास हेतु मुफ्त प्रशिक्षण, नवविकसित प्रौद्योगिकी की जानकारी तथा ऋण की सुविधाएं सहज उपलब्ध हैं जिनका लाभ ग्रामीण महिलाएं भी उठा रही हैं। खासकर लघु ग्रामीण, कुटीर तथा अति लघु क्षेत्र के उद्योगों में चूड़ी वाले हाथ भी आगे बढ़े हैं। उन्होंने वह कर दिखाया है जो कभी कठिन ही नहीं स्त्रियों के लिए असंभव कहा जाता था। यह भी ग्रामीण महिलाओं के सबलीकरण का एक चरण है।

बदली मानसिकता

शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वरोजगार, बचत, समूह सहायता आदि के माध्यम से देश के अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं ने सबलीकरण के उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। गांव में यदि एक महिला भी आगे आकर पहल कर ले तो कुछ ही समय में उस पूरे गांव की तस्वीर बदल जाती है। पेयजल, और ग्रामीण स्वच्छता से लेकर आर्थिक गतिविधियों तक में सखी सहेलियां शक्ति संपन्न होने लगती हैं। कहते हैं कि सही दिशा में किया गया प्रयास कभी बेकार नहीं जाता । स्थिति में सुधार अवश्य होता है तथा परिस्थितियां पहले की अपेक्षा बेहतर हो जाती हैं।

ग्रामीण महिलाओं की मानसिकता भी अब तेजी से बदल रही है किंतु विकास योजनाओं के बारे में जागरुकता उत्पन्न करने का कार्य फिर भी आसान नहीं है। गरीबी दूर करने तथा स्वरोजगार सृजन के बारे में महिलाओं को भी पूरी और सही जानकारी होनी चाहिए। तभी लाभार्थियों का चयन तथा ऋण एवं अनुदान का उपयोग सार्थक हो सकता है। ग्रामीण महिलाओं की दक्षता में बढ़ोतरी करने के लिए हितकारी उपाय तो अनेक हो सकते हैं। सवाल है कि उनमें अधिक से अधिक महिलाओं की सक्रिय भागीदारी कैसे सुनिश्चित की जाए। ग्रामीण महिलाएं स्वेच्छा से शामिल होकर उन्हें तरजीह दें तो बात बन सकती है।

प्रायः दीन–हीन, अशिक्षित और अकुशल ग्रामीण महिलाओं के हिस्से में वर्षों पूर्व ऐसे काम आते थे जो अत्यंत श्रमसाध्य तथा बहुत कम आमदनी वाले होते थे। गांव देहात की अधिकांश महिलाएं रस्सी, टोकरी और चटाई बनाने में ही जुटी रहती थीं। चरखों से सूत कातती थीं, फिर खाली समय में खरबूजे के बीज छीलती थीं अथवा मैदा के जवे तोड़ती थीं। बदले में उन्हें जो प्रतिफल मिलता था वह अत्यल्प होने के कारण उनके शोषण का प्रतीक लगने लगता था।

अपनी छोटी–छोटी बचत इकट्ठी करके प्रारम्भिक पूंजी एकत्र करने की दिशा में अलीगढ़ आदि कई जिलों में ग्रामीण महिलाओं ने बहुत अच्छा कार्य किया है। बैंक, उद्यमी महिलाओं को ऋण भी देते हैं। आवश्यकता संकोच, श्रम और उदासीनता को त्यागकर कर्म श्रेत्र में उतरने भर की है। गांव में आर्थिक गतिविधियां चाहे कृषि श्रेत्र से संबंधित हों या ग्रामोद्योग से संबंधित, ग्रामीण महिलाएं खुद अपने सबलीकरण के लिए उपलब्ध सुविधाओं का पूरा लाभ उठा सकती हैं। अवसर उनके लिए खूब हैं।

हस्तशिल्प, डेयरी, पोल्ट्री, रेशम, भेड़–बकरी पालन, बड़ी–पापड़, कृषि उपज का प्रसस्करण, मशरूम उत्पादन, ग्रामोद्योग तथा बागवानी जैसे क्षेत्र ग्रामीण महिलाओं के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं। सशक्तीकरण के लिए आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता को भी नजरअदांज नहीं करना चाहिए। समय का सदुपयोग अपनी कुशलता बढ़ाने में किया जाना चाहिए। स्वावलंबन की शीतल छाया तो खुद पास आ जाती है। इसलिए कभी भूल कर भी खाली बैठकर वक्त नहीं गंवाना चाहिए।

खादी एवं ग्रामोद्योग के क्षेत्र में लगभग एक सौ तथा लघु उद्योग के क्षेत्र में थोड़े बहुत नहीं पूरे 900 श्रेणियों के विभिन्न प्रशिक्षण की व्यवस्था सरकार ने कर रखी है। लघु उद्योग सेवा संस्थान ओखला नई दिल्ली तथा देश भर में फैले उसके 58 केंद्रों पर यह व्यापक सुविधा उपलब्ध है। अपना हुनर बढ़ाकर खुद अपना सबलीकरण किया जा सकता है। ग्रामीण महिलाओं के लिए अत्यंत उपयोगी प्रशिक्षण के कुछ प्रमुख क्षेत्र इस प्रकार हैं: सिलाई, कढ़ाई, अचार चटनी, जैम मुरब्बे, बेकरी, तेल बनाना, दरी, निवाड़, मौजे, स्टोव बत्ती, कागज के थैले, गत्ते के डिब्बे, कागज के फीते, बर्तन, दोने, कटोरीदार पत्तलें, बैग, पर्स, फैंसी सामान, मोती मालाएं, ब्रश, मोमबत्तियां पालिश तथा माचिस आदि अनेक चीजें हैं।

आधुनिक तकनीकी से इनका उत्पादन लाभकारी है। बशर्ते इनकी बिक्री अपने आस–पास के क्षेत्रों में की जा सके। इसलिए स्थानीय आवश्यकताओं के अनरूप कार्य करना अधिक लाभकारी होता है। प्रारंभिक कठिनाइयों से नहीं घबराएं बल्कि हिम्मत से खुद आगे आएं। यही आज वक्त की मांग और समय का तकाजा है। ❑

77–गांधीनगर
बरेली–243122
(उप्र)

हताशा

डा. विनोद कुमार सिन्हा

ज्ञानेश्वर बाबू का बेटा कपिल आज से लगभग दस वर्ष पूर्व घर छोड़कर चला गया। बड़ी मुश्किल से मैट्रिक तक पढ़ पाया था। जब वह मैट्रिक में पढ़ रहा था तभी की बात है, ज्ञानेश्वर बाबू ने उसे एक जैकेट खरीद दी। उसने एक दिन पहना उसके बाद पहनना छोड़ दिया। मां ने पूछा,"कपिल इतनी ठंड है– तुम जैकेट क्यों नहीं पहनते!" कपिल ने उत्तर दिया– "अम्मी! गांव का जो आदमी काठमांडू में फुटपाथ पर हांक लगाकर सामान बेचता है उसके बेटे पांच–पांच सौ रुपये की जैकेट पहनते हैं। पापा के पास तो पांच बीघा जमीन है, आटाचक्की है, फिर भी मेरे लिए डेढ़ सौ रुपये की यह घटिया जैकेट खरीद ली है उन्होने।" मां चुपचाप सुनती रही। वह कैसे समझाए अपने बेटे को कि पांच बीघे जमीन से तो कुछ होता नहीं। कभी बाढ़, कभी सूखा। बाढ़–सूखे की मार से अगर कुछ बच भी जाए तो सरकार गेहूं की न्यूनतम कीमत घोषित करती है सवा छह सौ रुपये प्रति क्विंटल। अगर आटाचक्की नहीं रहती तो घर में चूल्हा जलना कठिन हो जाता। आटाचक्की से ही पांच आदमी के परिवार का भोजन चल पाता है। खेती से क्या होगा – दवा, कपड़ा, पढ़ाई अगर चल जाए तो यही बहुत है।

जब तक कपिल पढ़ता रहा मनलायक कपड़े मां–बाप न भी दें – परंतु इतना ख्याल वे अवश्य रखते थे कि भोजन पौष्टिक हो, दूध–दही नियमित हो, कभी–कभार फल, मांस–मछली भी आ जाए। किसी तरह कपिल मैट्रिक पास कर गया।

ज्ञानेश्वर बाबू ने कहा कि एक साइकिल खरीद देता हूं और चंदौली कालेज में नामांकन करवा देता हूं यहां से मुश्किल से चार–पांच मील है चंदौली कालेज, जानते ही हो। अपनी साइकिल से प्रतिदिन नियमित रूप से कालेज जाना। दोपहर का नाश्ता साथ ले जाना। पढ़–लिखकर कुछ बन जाओगे बेटा तो तुम्हारी मां के साथ मुझे भी सुकुन मिलेगा। परंतु कपिल ने उनकी एक न सुनी।

ज्ञानेश्वर बाबू के पिता आयुर्वेदिक वैद्य थे। कौन नहीं जानता है बाबू शीतला प्रसाद वैद्य को? तांगे पर चढ़कर बेलसंड तक, परसौनी तक, सीतामढ़ी तक मरीज देखने जाया करते थे। एक जमाना था जब इस इलाके में उनकी तूती बोलती थी। बड़े लाड़–प्यार से पढ़ाया उन्होंने अपने इकलौते पुत्र को। ज्ञानेश्वर बाबू आईए पास नौकरी ढूंढ़ने और इंटरव्यू देने में दस वर्ष बीत गए। इस बीच बाबू शीतला प्रसाद भी चल बसे। ज्ञानेश्वर बाबू को कहीं नौकरी न मिली। शादी भी हो गई। खेत की उपज हो या मारी जाए, परंतु संतति की उपज को कौन रोक सकता है? देखते–देखते तीन बच्चे हो गए– दो बेटियां, एक बेटा। इस बीच उनकी मां भी चल बसीं। अब तो खेती व्यवयाय बन गई है। जितनी पूंजी लगाओ, उतनी पाओ। पूंजी का अभाव, मजदूरों का

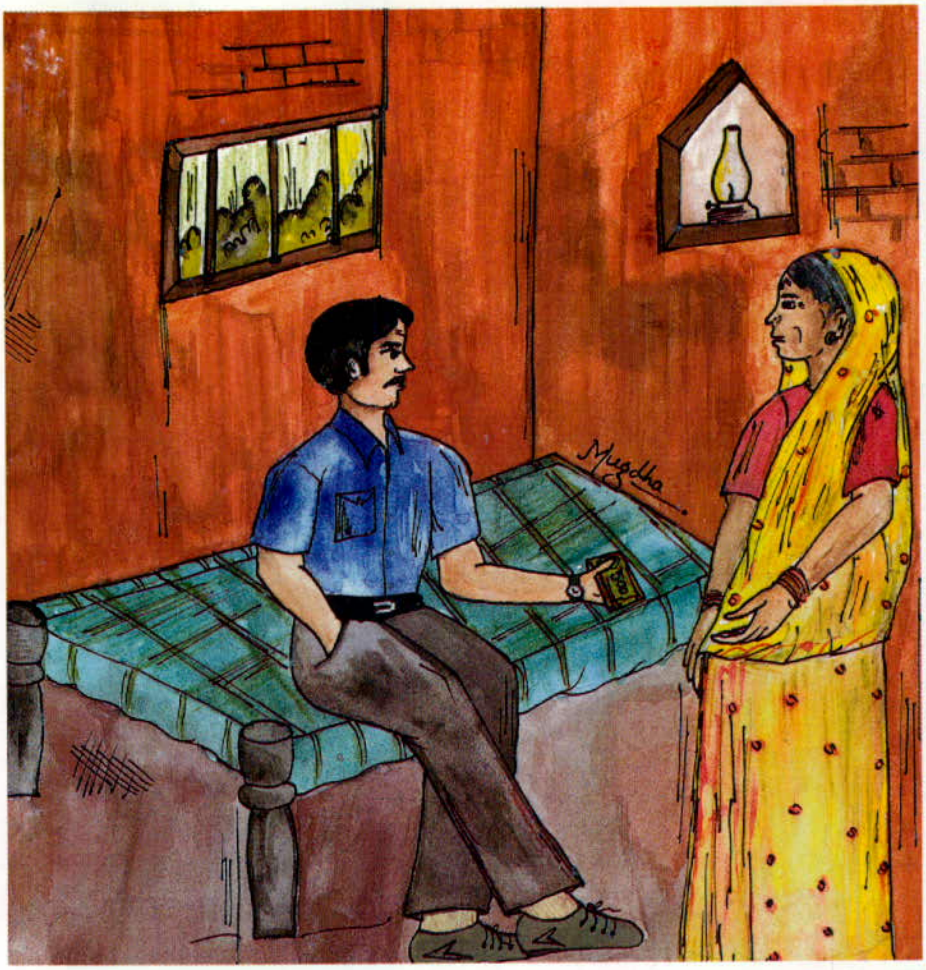

पलायन, खाद में मिलावट, मौसम का प्रकोप। चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा। ज्ञानेश्वर बाबू ने खोपा की दो बीघा जमीन बेच दी और उस पैसे से दरवाजे पर ही एक आटाचक्की बैठा दी। तब से किसी तरह घर–परिवार चल जाता है, यही बहुत है। ज्ञानेश्वर बाबू देख रहे थे कि दिन–ब–दिन कपिल की संगति खराब होती जा रही है। मिडिल पास करने पर जब उन्होंने कपिल का अथरी हाईस्कूल में नामांकन कराया तब से ही कपिल को पंख लग गए थे। अथरी जमींदारों का गांव। अब न जमींदार रहे और न जमींदारी। रस्सी जल गई, पर एंठन न गई। नवाबी मिजाज बना रहा। जमाने को देखकर जमींदार भले ही दुबक गए या बदल गए परंतु उनके रईसजादों के दिमाग तो चढ़े ही रहे। वे बदलने से रहे।

आज के जमाने में नकल की प्रवृत्ति बहुत बढ़ गई है न! अधिकतर लोग कठिन चीजों की नकल नहीं करते, सरल चीजों की करते हैं। विद्या, बुद्धि, प्रतिभा, अध्यात्म आदि की नकल तो कठिन है, परंतु ताश खेलने, शराब पीने, गुटखा खाने, मोटर साइकिल दौड़ाने की नकल तो आसान है। कपिल निम्न मध्यम वर्गीय पिता का पुत्र – उसे जब जमींदारों के पुत्रों की कुसंगति हो गई तो वह बिगड़ता ही चला गया।

कपिल कभी–कभी ऐसे तर्क देता कि कम पढ़े–लिखे ज्ञानेश्वर बाबू उसके तर्क से पिट जाते और निरुत्तर हो मूक बन उसका मुंह देखते रह जाते। एक दिन जब ज्ञानेश्वर बाबू ने कपिल पर बहुत जोर देकर कालेज में नामांकन कराने और पढ़ने के लिए कहा तो कपिल ने बसाख्ता उत्तर दिया–

"पापा! क्या होता है आईए–बीए पास करने से? आप भी तो आईए पास थे। कहीं नौकरी मिली आपको? आज आटाचक्की चला रहे हैं। इसी गांव में विश्वेश्वर बाबा बीए पास है, कहने को कवि हैं – साहित्यकार हैं – बाहर भले ही उनकी प्रतिष्ठा हो, सम्मान हो, गांव में कितनी प्रतिष्ठा है? दर्जनों कापियां उनकी लिखी कविताओं से भरी हैं – परंतु पास में पैसे नहीं कि एक भी किताब छप सके। गांव में बड़े–बड़े अफसर हैं, डाक्टर–इंजीनियर हैं, इसी गांव के अफसर कई

मुख्यमंत्री के सुरक्षा अधिकारी भी रह चुके हैं परंतु किसी ने उनकी एक भी किताब छपवाकर उन्हें प्रोत्साहित नहीं किया। कागज कलम खरीदने तथा समारोहों में जाने में फसल लगी जमीन बंधक रखनी पड़ी। कवि–सम्मेलन में भले ही रसगुल्ले खाते हों, पर कितने दिन? बाकी दिन तो गांव में उन्हें भी देवनंदन सेठ के सामने कभी एक मन गेहूं के लिए तो कभी दो सौ रुपये कर्ज के लिए गिड़गिड़ाना पड़ता है। दूसरी तरफ थूमा के वामदेव को देखिए, जीप पर घूमता है, दो अंगरक्षक मोटर साइकिल पर साथ चलते हैं। अथारी के मनीष को देखिए जीप पर घूमता है। इन लोगों ने कौन–सी पढ़ाई की है? उनमें दुनियादारी की समझ है।

ज्ञानेश्वर बाबू कपिल के कुतर्कों से चुप हो जाते परंतु मन ही मन सोचते कि आज के युवा ऐसा क्यों सोचते हैं? वह क्या बोल रहा है, क्या सोच रहा है? क्या वह हताश है, छलावे में है, या सच बोल रहा है? क्या युवा वर्ग आज की परिस्थितियों के कारण ऐसा बोलने को मजबूर हो गया है? इन परिस्थितियों का जिम्मेवार कौन है– अपराधियों का राजनीतिकरण या बेरोजगारी से उत्पन्न हताशा?

कपिल ने कालेज में नामांकन नहीं कराया। पिता के दबाव से बचने के लिए या जिंदगी के रोमानी सपने आजमाने के लिए वह घर से भाग गया। दो साल काठमांडू में रहा, दो साल लखनऊ में फिर उसके बाद इलाहाबाद। आरंभ के चार साल तो कपिल के पत्र भी आए उसके बाद उसकी चिट्ठियां आने लगीं। लेकिन कभी भी उसने पिता को पत्र नहीं लिखा, हमेशा मां को ही लिखता। खुद भी एकाध साल पर दो दिनों के लिए आ जाता। बाद में वह घर पर रुपये भी भेजने लगा।

दो साल पहले कपिल एक टाटा सूमो गाड़ी पर आया था। उसके साथ तीन–चार

मित्र भी थे। मात्र एक घंटे घर पर रुका। ज्ञानेश्वर बाबू का खपरैल का छोटा–सा घर, आटाचक्की की घर्र–घर्र आवाज, कैसे और कहां ठहराए, वह अपने मित्रों को। कपिल ने शहर जाकर होटल में दो कमरे बुक किए–उसमें अपने मित्रों को ठहराया और रात में फिर अपने घर आ गया। सुबह होने पर जब वह वापस जाने लगा तो अपनी मां को उसने पांच सौ रुपये के नोटों की एक गड्डी दी और कहा कि पापा को कह कर रहने लायक एक कोठरी बनवा लो जिसमें शौचालय तथा स्नान घर साथ–साथ हों। यह रुपये तुम अपने पास रखना – जब काम में हाथ लग जाए तभी पापा को देना, नहीं तो इसकी वे जमीन खरीद लेंगे।

गांव में बैंक की शाखा है। कपिल की मां ने एक दिन गांव के पूर्व मुखिया उपेन्द्र ठाकुर को बुलवा भेजा। उन्ही के साथ जाकर उन्होंने पचास हजार रुपये का तीन महीने के लिए लघु अवधि जमाखाता खुलवाया। परंतु रुपये के संबंध में उसने ज्ञानेश्वर बाबू से कुछ नहीं कहा। ठाकुर जी ने भी उनके आग्रह पर इस बात का खुलासा नहीं किया। बरसात के बाद जब गांव का रास्ता खुला तब कपिल की मां ने रुपये निकालकर ठाकुर जी के सहयोग से ही सैदपुर से भवन निर्माण संबंधी सामग्री मंगवाई, तब कहीं ज्ञानेश्वर बाबू को इस रहस्य की जानकारी मिली।

दशहरा के बाद काम में हाथ लग गया और शौचालय, स्नानघर युक्त कोठरी तैयार हो गई। गांव के लोग कपिल की प्रशंसा के पुल बांधने लगे और ज्ञानेश्वर बाबू को बधाई देने लगे। 'ऐसा बेटा भगवान सब को दे' – सभी के मुंह से अनायास यह बात निकल जाती।

चकाचौंध की मृगतृष्णा में असली नकली की पहचान खो जाती है। ज्ञानेश्वर बाबू भी कभी–कभी सोचने लगते हैं कि क्या कपिल का तर्क सही था? क्या कपिल उनसे अधिक व्यावहारिक है और उसमें दुनियादारी की समझ अधिक है? क्या विश्वेश्वर चाचा कोरे आदर्शवादी हैं जो जीवनपर्यंत विफल हुए? फिर कभी–कभी उनके मन में यह प्रश्न कीड़े की तरह कुलबुलाने लगता है कि आखिर कपिल करता क्या है? इतने पैसे उसने लाए कहां से? जब–जब ज्ञानेश्वर बाबू अपनी पत्नी के समक्ष अपनी इस शंका को रखते तब–तब उनकी पत्नी डांट देती उन्हें – "आप बड़े शंकालु हैं। खुद तो जीवनभर कुछ कर न सके आज बेटे की कमाई देखकर जलन होती है।" ज्ञानेश्वर बाबू पत्नी की डांट सुनकर मूक बन जाते।

इधर कपिल दो वर्षों से घर नहीं आ रहा था। उसके दिए रुपये से किस तरह घर बना उसने देखा भी नहीं। मां बराबर कहा करतीं 'बउआ रुपय्या दे गेंलै ओही से घर बनल, उसने जेकिन एकउ दिन औही में रह नहीं सकल।'

धीरे–धीरे ज्ञानेश्वर बाबू की दिनचर्या पूर्ववत हो गई। मनहूंडा खेती, आटाचक्की की कमाई और दो पुत्रियों सहित पति–पत्नी के परिवार की धीमी रफ्तार से चलती जिंदगी की गाड़ी।

हल्की–हल्की सर्दी शुरू हो रही थी। गांव में सांझ होते ही निपट सन्नाटा व्याप जाता। ऐसी ही एक रात बीते विश्वेश्वर बाबू घर आए। किसी सम्मेलन में इलाहाबाद गए थे। वह साल में दस महीने घर से बाहर ही रहते हैं। केवल कार्त्तिक और वैसाख में मनहूंडा अन्न वसूली के लिए घर आते हैं। वे ज्ञानेश्वर बाबू के पड़ोसी हैं। रिश्ते में चाचा लगते हैं। रात में उनके घर का ताला खुलने की आवाज हुई। लालटेन की रोशनी भी हुई। ज्ञानेश्वर बाबू ने समझ लिया कि वह लौट आए हैं। उनकी मुलाकात नहीं हुई। सवेरे ज्ञानेश्वर बाबू उनसे मिलने जा रहे थे, रास्ते में ही उनकी भेंट विश्वेश्वर बाबू से हो गई। वह हाथ में एक पुराना अखबार लिए उनकी तरफ ही चले आ रहे थे। ज्ञानेश्वर बाबू रुक गए उन्होंने आदर व्यक्त करते हुए कहा, चाचा जी, प्रणाम! क्या खबर है अखबार में? पहले तो कुछ बोल नहीं पाए, थोड़ी देर चुप खड़े रहे, फिर लगभग रुंधे स्वर में बोले, बहुत ही बुरी खबर है बेटा। चलें पहले घर चलो, ज्ञानेश्वर बाबू उनके साथ वापस घर आ गए। उन्होंने इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र का लगभग सालभर पुराना अंक दिखलाया जिसे लिए–लिए वह चले आ रहे थे। उन्होंने नगर पृष्ठ की एक खबर पर उंगली रखी और अखबार ज्ञानेश्वर बाबू की ओर बढ़ा दिया। उसमें छपा था – "13 सितंबर 2001, इलाहाबाद। नगर पुलिस के सहयोग से धनगंज में इलाहाबाद नगर आरक्षी अधीक्षक ने छापा मारकर कपलेश्वर कुमार सिंह उर्फ कपिल नामक एक व्यक्ति को गिरफ्तार किया है। कपिल के निवास से शहर के चर्चित डाक्टर जायसवाल अपहरण कांड में फिरौती के रूप में मिले हिस्से के पांच लाख रुपये तथा अपहरण में प्रयुक्त गाड़ी भी बरामद की गई है। बरामद कागजात के अनुसार कपलेश्वर कुमार सिंह बिहार के सीतामढ़ी जिले के किसी गांव का रहने वाला है।

इस बीच कपिल की मां भी विश्वेश्वर बाबू के लिए नाश्ते चाय की प्लेट लेकर आ चुकी थी और उन्हें पायलागी कर एक किनारे खड़ी हो गई थीं। समाचार पढ़ते ही कपिल के पिता मर्माहत ही नहीं हुए, बेचैनी से भर उठे। पत्नी अवाक उनका मुंह देख रही थीं। जब उन्होंने पूरा वाक्य सुना तो रोने लगीं विश्वेश्वर बाबू ने समझाया "ईश्वर जो चाहते हैं वही होता है। ईश्वर वैसा ही फल देते हैं जैसा कर्त्तव्य होता है। तुम लोग चुप हो जाओ और ईश्वर से प्रार्थना करो। कपिल के माता–पिता विश्वेश्वर बाबू के समझाने–बुझाने पर चुप तो हो गए परंतु दोनों एक–दूसरे को टकटकी लगाए देख रहे थे। दोनों के मन में तर्कों–कुतर्कों का पारस्परिक युद्ध चल रहा था। क्षणिक आवेश जब थिरा तो ज्ञानेश्वर बाबू को अतीत के दो दशक चलचित्र की भांति याद आने लगे। याद आया उन्हें अपने ही मन के उहापोह के बाद कई–कई बार उभरा यह निष्कर्ष कि जिस राह पर बढ़ रहा है कपिल वह उसके पतन का कारण बनेगा। कपिल बाबू हर बार अपने मन ही इस आशंका को झटक देते थे। कभी–कभी उन्हें भी पत्नी की बातों पर यकीन होने लगता– कहीं वह बेटे की प्रगति से ईर्ष्या तो नहीं करते। आज उन्हें लगा कि वह सच से आंखें फेर रहे थे। कपिल का कर्म साक्षात सामने खड़ा वीभत्स हंसी हंस रहा था। ❑

ग्राम–पो : बेलाही, वाया : अथरी
जिला : सीतामढ़ी – 843311 (बिहार)

भारतेंदु मिश्र

दिल्ली कोसों दूर अभी

कुछ आजाद हुईं
लेकिन कुछ हैं मजबूर अभी।
लज्जा के गहरे दलदल में
डूबी उम्र कटी
उसकी भोली मुस्कानों पर
सबकी आंख फटी
बदला नहीं गांव में घर में
यह दस्तूर अभी।
चूल्हा चौकी रोटी पानी
उसके लिए बने
मर्द और बच्चे छाती पर
अकड़े खड़े तने
नारी की जय–जय करते हैं
शायर कभी–कभी।
आंगन से सीढ़ी के जरिये
वह छत पर आई
नयी सदी के नए दौर की
है यह ऊंचाई
खुली एक खिड़की है
दिल्ली कोसों दूर अभी।

महाराज जी शोकाकुल हैं

कहीं अवध पर गाज गिरी है
महाराज जी शोकाकुल हैं।
उड़े किसानों के सब छप्पर
आंधी आई पानी बरसा
खेतों की मेड़ों पर बैठे
मीटिंग करते यहां बकुल हैं।
कटा गांव सब संपर्कों से
नदियां हुईं समंदर जैसी
सर्वे होता दर्द पूछते
इंतजाम सो ढुलमुल हैं।
कौए लिए कैमरे उड़ते
चित्र खींचते बदहाली के
नई योजना में प्रस्तावित
इसी नदी पर दो–दो पुल हैं।

औरत

औरत घर का स्वाभिमान है
औरत से घर भासमान है।
आग जलाती देह गलाती
अन्नपूर्णा है वह घर की
आदिम स्वाद भरे आंचल में
वह घर–घर में विद्यमान है।
जिसके होने भर से घर का
हर कोना महका करता है
कभी धूप तो कभी चांदनी
वह मुट्ठी भर आसमान है।❑

पाकेट–एल 187/सी
दिलशाद गार्डन, दिल्ली – 110095

मनोज मोहन

खोए हुए इंद्रधनुष

अभी–अभी एक सपना गुजर गया
नींद आई ही थी
सपने में कई दृश्य एक साथ दिखे
रंग सात नहीं थे
पता नहीं कहां खो गए थे इंद्रधनुष
अनुपात बदल गया था रंगों का
लगता था मानो
नीले रंग ने सबको लील लिया हो
और तभी नींद उचट आई थी
आंखों के सामने
फैला था
शुभ्र नीला आकाश!

अतीत की यादें

अतीत की यादें
तुम से जुड़ीं
अलग–अलग जगहों पर रहते हुए भी
कहीं कुछ साथ था
सुकून और बेचैनी के बीच
थी हम दोनों की मुहब्बत
बीच से नदी नहीं गुजरी थी
जहाज जिस पर लदा था
चाहत, इच्छा और एक दूसरे के दिलों में
उठते हजारों मूक शब्द
कभी इस तट लगता कभी उस तट
नदी नहीं गुजरी थी बीचों बीच
पारदर्शी जल के बीच तल से सटा था जो
हीरा वह तुम थी
आज जो वर्तमान है
अतीत की यादें हैं
और यादों के बीच हो
तुम

बेरोजगारी

बेरोजगारों को क्या मिलता है
लौटने पर घर?
पिता की खीझ भरी चुप्पी
मां की संभावना–भरी आंखों में
सपनों के टूट–टूट जाने का दंश
और घर के बाहर नुक्कड़ पर
सार्थक–निरर्थक बहसों के बीच
आती चाय की प्यालियां
और फिर चाय खत्म होने के बाद
मित्रों के बीच पसरता
सन्नाटा

संत्रास

हजारों लोग
हर रोज मर–मर के जीते हैं।
मैं हर रोज जीते हुए
थोड़ा–थोड़ा मरता हूं
बारूद से उड़ते हैं
आस्था के द्वीप
लेकिन रोज ही
बिना बारूद के भी
दिल की कोमल भावनाएं, इच्छाएं
उड़ जाती हैं कपूर की तरह
और बची रह जाती हैं
तिक्तता/घुटन/कुंठा
अगले दिन थोड़ा और मरने के लिए संत्रास।❑

पीडी – 63/सी, पीतम पुरा
दिल्ली–110088

गांव तथा परिवार के विकास में ग्रामीण महिलाओं की उद्यमिता

ज्योति यादव
नीलिमा कुंवर

भारत गांवों का देश है। देश की 70 प्रतिशत से अधिक आबादी गांवों में बसती है। इसलिए स्वाभाविक है कि देश की लगभग 70 प्रतिशत महिलाएं ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती हैं। अतः ग्रामीण विकास में इन महिलाओं की प्रभावपूर्ण भागीदारी आवश्यक और अनिवार्य मानी जानी चाहिए। किंतु देश की सामाजिक स्थितियों और परंपराओं के कारण ग्रामीण महिलाओं के इस महत्वपूर्ण योगदान को न तो महत्व दिया गया और न ही अवसर प्रदान किया गया। प्रोत्साहन की बात देश के पुरुष प्रधान समाज को संभवतः स्वीकार्य ही नहीं थी। जबकि सच्चाई यह है कि भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की अत्यंत महत्वपूर्ण और जीवंत भूमिका रहती है।

सामाजिक–आर्थिक प्रक्रिया

मानव के सभ्य जीवन के विकास में सामाजिक प्रक्रिया की उल्लेखनीय भूमिका रही है और इस विकास में महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण और उपयोगी बनी हुई है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि बुनियादी आवश्यकताओं के लिए यदि किसी ने आवश्यक वस्तुओं की खोज की तो उनमें महिलाओं का स्थान सर्वप्रथम है भले ही पुरुष प्रधान भारतीय समाज ने इस महत्वपूर्ण योगदान को स्वीकार नहीं किया है। पुरुषों ने महिलाओं को अपना अनुगामी बनाए रखा तथा उन्हें अनेक प्रकार के रूढ़िगत सामाजिक और आर्थिक बंधनों में जकड़े रखने में अपना महत्व प्रतिपादित किया। इस कारण संपूर्ण देश तथा विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, महिलाओं की सामाजिक परिस्थितियां अत्यंत शोचनीय बनी रही हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के बाद भारतीय समाज में कुछ जागरूक वर्गों द्वारा नारी उत्थान की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य करने तथा स्वयं महिलाओं के दृष्टिकोण में क्रांतिकारी परिवर्तन आने से उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा में सुधार हुआ। साथ ही महिलाओं के सामाजिक शोषण को रोकने तथा समानता का अवसर प्रदान करने के उद्देश्य ने शासन से भी अनेक कानून बनाए।

सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियां

सन् 2001 की जनगणना के अनुसार जहां देश की समग्र साक्षरता का प्रतिशत 65.38 है, जबकि महिला साक्षरता का प्रतिशत 54.46 है और पुरुष साक्षरता का प्रतिशत 75.85 है।

खेदजनक बात तो यह है कि ग्रामीण और शहरी महिलाओं की साक्षरता में काफी अंतर हैं। ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं की साक्षरता 73.2 प्रतिशत है। विडंबना है कि भारत की ग्रामीण महिलाओं में निरक्षरता अभी भी 85 प्रतिशत से अधिक बनी हुई है।

आज अनेक ग्रामीण परिवार लड़कियों की शिक्षा पर व्यय को अपने साधनों का दुरुपयोग मानते हैं। दुर्भाग्यपूर्ण बात तो यह है कि समाज के कुछ वर्गों में अभी भी लड़कियों के जन्म को अमांगलिक और अपशकुन मानने की रूढ़िगत परंपरा विद्यमान है। इस तरह नारी की उपेक्षा उसके जन्म से ही प्रारंभ हो जाती है। उपेक्षा के फलस्वरूप ही ग्रामीण महिलाओं को लाभकारी व्यवसायों में भूमिका निभा पाने में असमर्थ माना जाता है। फलस्वरूप उन्हें कृषि कार्यों में कार्यरत रहना पड़ता है।

आज भी ग्रामीण महिलाओं के लिए कृषि एक प्रमुख आर्थिक कार्य है। लेकिन वहां भी पुरुष एवं महिलाओं की मजदूरी में अंतर रखकर महिलाओं का आर्थिक शोषण किया जा रहा है। राष्ट्रीय श्रम आयोग की रिपोर्ट के अनुसार अभी प्रायः सभी क्षेत्रों एवं विशेषकर कृषि के क्षेत्र में, पुरुषों एवं महिलाओं के बीच की मजदूरी का अंतर जारी है। सरकार का दावा है कि नई अर्थनीति से विकास दर बढ़ेगी एवं रोजगार के आर्थिक अवसर उपलब्ध होंगे।

आर्थिक सहभागिता

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के आंकड़ों से आभास मिलता है कि ग्रामीण श्रमिकों का काफी बड़ा भाग स्वरोजगार में लगा है अथवा वे गैर भुगतान वाले पारिवारिक श्रमिक के रूप में कार्यरत हैं और अल्प रोजगार प्राप्त हैं। कृषि क्षेत्र में महिलाओं का एक बहुत बड़ा भाग गैर भुगतान प्राप्त पारिवारिक श्रमिक के रूप में कार्यरत है।

विविध क्षेत्रों में भूमिका

भारतीय ग्रामीण महिलाएं विभिन्न स्तरों पर विभिन्न कार्यों में विविध प्रकार की भूमिका निभाती हैं और उन्हें कुशलता से पूरा करती हैं। इनमें से कुछ प्रमुख क्षेत्रों में महिलाओं की भूमिका निम्नवत है :

घरेलू भूमिका : लालन–पालन, भोजन पकाना, पानी लाना, घर की सफाई करना और रखरखाव अधिकतर महिलाओं द्वारा ही किया जाता है। ग्रामीण महिलाएं परिवार के वृद्ध और विकलांग लोगों की विशेष देखभाल करती हैं। कच्चे मकानों में रहने वाली महिलाएं वर्षा ऋतु की समाप्ति पर कम से कम एक बार अथवा किसी महत्वपूर्ण त्यौहार के समय अपने घर की पुताई का कार्य भी करती हैं।

कृषिगत कार्यों में भूमिका : ग्रामीण क्षेत्रों की महिला श्रमिकों का एक बहुत बड़ा भाग कृषि कार्यों में लगा है। महिलाओं को खाद डालने, बीज बोने, घास–फूस हटाने, निराई–गुड़ाई, खाद्यान्नों की सफाई, भंडारण, पशुओं के चारे का प्रबंध, पशुओं की देखभाल, सब्जी उगाने और बेचने संबंधी दैनिक कार्य करना पड़ता है।

ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों में भूमिका : भारत में ग्रामीण और कुटीर उद्योगों का संचालन पारिवारिक इकाई के स्तर पर होता आया है। ऐसी स्थिति में इनके संचालन में ग्रामीण महिलाओं का व्यापक योगदान रहा है। खिलौने, दरी, गलीचे, टोकरी, मोमबत्ती बनाना, चटाई, दालों की पैकिंग, सिलाई–कढ़ाई इत्यादि जैसे कार्यों में महिलाओं की सहभागिता सर्वाधिक होती है।

विशिष्ट भूमिका : महिलाओं के संबंध में यह कहा जाता है कि परिवार में उनकी विशिष्ट भूमिका होती है जैसे वे पत्नी, बहन एवं माता का दायित्व निभाने के साथ–साथ अपनी अभिरुचियों के अनुरूप समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त करने के लिए सामूहिक अभियान चलाती हैं। अपने इन सामूहिक आंदोलनों में कई राज्यों, जैसे उत्तर प्रदेश तथा आंध्र प्रदेश, में ग्रामीण महिलाओं को नशाबंदी अभियान तथा भ्रष्टाचार को समाप्त करने में कुछ हद तक सफलता भी मिली है।

अपेक्षित कुशलताएं

ग्रामीण महिलाओं को लाभदायक रोजगार प्रदान करने और पुरुषों के बराबर पारिश्रमिक अर्जित करने में आड़े आने वाले अवरोधों का उल्लेख किया जा चुका है। इन सामाजिक–आर्थिक अवरोधों के बावजूद प्रत्येक समाधान के उपाय भी ढूंढने होंगे। ये उपाय कुछ अवरोधों के लिए अल्पकालिक तथा कुछ के लिए दीर्घकालिक नीतियों के रूप में हो सकते हैं। रोजगार चाहने वाली महिलाएं मुख्यतः गरीब कृषक परिवारों की होती हैं। सावधानीपूर्वक विश्लेषण करने के लिए इन दोनों ही परिवारों की ग्रामीण महिलाओं के लिए वांछित कुशलताओं और सुविधाओं की दृष्टि से इनकी आवश्यकताओं की पृथक–पृथक समीक्षा किया जाना आवश्यक है। रोजगार का सृजन करने वाले विभिन्न कार्यक्रमों और नीतियों को बनाते समय इनमें गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाली ग्रामीण भूमिहीन महिलाओं की प्राथमिकता सुनिश्चित की जानी चाहिए। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी द्वारा खोले गए रोजगार के नवीन प्रकल्पों से उत्पन्न अवसरों के द्वारा महिलाओं को लाभ देने का प्रयास किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण के लिए विद्यमान अवसरों की सावधानीपूर्वक समीक्षा करनी होगी एवं उनमें समुचित संशोधन तथा विस्तार करना होगा।

जहां तक गरीब महिलाओं का प्रश्न है उन्हें इस प्रकार की दक्षता या प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए कि उन्हें अपेक्षाकृत अधिक मजदूरी मिल सके। उनके लिए शिशुओं की देखभाल, ग्राम शिल्प, कताई, बुनाई, चटाई बुनने, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, सिलाई, चित्रकला आदि का प्रशिक्षण स्वरोजगार एवं पारिश्रमिक प्राप्ति हेतु काफी लाभप्रद हो सकता है।

ग्रामीण महिलाओं के उपर्युक्त विकास, राष्ट्रीय उत्पादन में उनकी सहभागिता और समाज में अग्रणी भूमिका के लिए आवश्यक है कि उन्हें आरक्षण के माध्यम से विशेष अवसर प्रदान किए जाएं। उनकी सामाजिक कुंठाओं को समाप्त करने की दिशा में उन्हें विशेष प्रोत्साहन, सहयोग एवं मार्गदर्शन की तथा क्षमताओं को विकसित करने की आवश्यकता है। सरकार को इस दिशा में विशेष प्रयास करने होंगे। इस दिशा में महिलाओं को स्वयं जागृत होना पड़ेगा। उन्हें ग्रामीण स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक अपने अधिकारों की लड़ाई को मजबूती से लड़ने के लिए हमेशा तत्पर रहना पड़ेगा। ❑

चशेआ कृषि एवं प्रो. विश्वविद्यालय
कानपुर

राजस्थान में मधुमक्खी पालकों का पहला जिला बना भरतपुर

सुबोध अग्रवाल*

देश में बढ़ती हुई आबादी एवं रोजगार की आवश्यकता के अनुरूप संसाधन उपलब्ध नहीं होने से बेरोजगार युवा ऐसे स्वरोजगार की तलाश में रहते हैं जिससे कम लागत से उन्हें अधिक मुनाफा मिल सके। ऐसे समय में उन्हें सही मार्गदर्शन, उचित प्रशिक्षण व समय पर आर्थिक संसाधन प्राप्त हो जाएं तो वे स्वरोजगार के क्षेत्र में कीर्तिमान कायम करने में भी पीछे नहीं रहते। ऐसा ही कर दिखाया भरतपुर जिले के बेरोजगार युवाओं ने जिन्होंने मधुमक्खी पालन का प्रशिक्षण लेकर वित्तीय वर्ष 2001–2002 के दौरान 650 टन शहद का उत्पादन कर 2 करोड़ 60 लाख रुपये की आय प्राप्त की और भरतपुर जिले को राज्य का पहला मधुमक्खी पालकों का जिला बनाकर अनुकरणीय कार्य कर दिखाया।

भरतपुर में मधुमक्खी पालन का व्यवसाय संगठित तरीके से करीब तीन वर्ष पूर्व शुरू हुआ जब *लुपिन ह्यूमन वेलफेयर एंड रिसर्च फाउंडेशन* नामक स्वयंसेवी संगठन ने 150 युवाओं को प्रशिक्षण देकर और उन्हें बैंकों के माध्यम से ऋण मुहैया कराकर मधुमक्खी पालन का व्यवसाय आरंभ कराया। इनमें से मात्र 24 युवाओं ने ही मधुमक्खी पालन का काम शुरू किया। इन युवाओं को मिले अप्रत्याशित लाभ को देखकर बेरोजगार युवाओं में जागृत्ति आई। युवकों के साथ–साथ युवतियां भी इस क्षेत्र में स्वरोजगार के लिए आने लगीं। युवक एवं युवतियों को प्रशिक्षण देने के कार्य में राज्य का उद्यान विभाग कृषि विश्वविद्यालय का कृषि विज्ञान केंद्र, कृषि विपणन बोर्ड सहित छह अन्य स्वयंसेवी संगठनों ने भी मधुमक्खी पालन का प्रशिक्षण देना आरंभ किया। इन संगठनों ने अब तक 973 युवक–युवतियों को प्रशिक्षित किया है। इनमें से 264 युवकों और पांच युवतियों ने मधुमक्खी पालन को स्वरोजगार के रूप में अपनाया है। इनकी तुलना को देखते हुए आगामी वर्षों में भरतपुर जिले में मधुमक्खी पालन युवाओं के लिए स्वरोगार का मुख्य साधन बन सकता है।

भरतपुर जिले में मधुमक्खी पालन व्यवसाय के फलने–फूलने का मुख्य कारण करीब एक लाख 70 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल में बोई जाने वाली सरसों की फसल एवं मौसमी परिस्थितियां हैं। मधुमक्खियों को मध्य अक्तूबर से जनवरी माह के अंत तक सरसों की फसल से मकरंद एवं पराग प्रचुर मात्रा में मिलता है। इन दिनों तापमान भी 20 डिग्री सेंटीग्रेड से अधिक नहीं होने से मधुमक्खियां अपना काम अधिक गति से करती हैं जिससे मधुमक्खियों के छत्ते एक सप्ताह में शहद से भरने लगते हैं। सरसों की फसल से प्राप्त मकरंद एवं पराग से मधुमक्खियों द्वारा उत्पादित शहद घी की तरह जमा हुआ होने के कारण इसकी विदेशों में भारी मांग रहती है क्योंकि वहां डबल रोटी पर मक्खन के स्थान पर शहद लगाकर खाने का प्रचलन

*जिला कलेक्टर, भरतपुर – 321001 (राजस्थान)

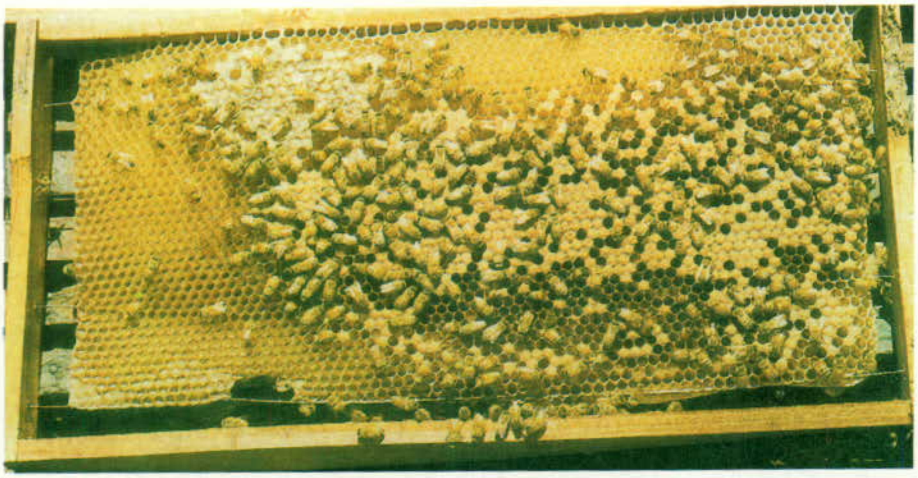

बढ़ा है। मधुमक्खी पालन के व्यवसाय को गति दिलाने में उद्यान विभाग एवं खादी ग्रामोद्योग ने भी उत्प्रेरक कार्य किया। इन संस्थाओं ने मधुमक्खी पालन के लिए 25 से 30 प्रतिशत अनुदान देने की योजना आरंभ की। साथ में बैंकों ने भी आसान किश्तों पर ऋण मुहैया कराया। इसी का परिणाम रहा कि युवक भारी संख्या में इसे स्वरोजगार के रूप में अपनाने लगे। इस व्यवसाय को गति देने में सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारक यह भी रहा कि शहद के विपणन के लिए मधुमक्खी पालकों को कहीं भी जाना नहीं पड़ता बल्कि शहद के निर्यातक मधुमक्खी पालकों से उनके स्थान से शहद खरीदकर ले जाते हैं। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि जिस फसल अथवा वृक्षों के फूलों से मधुमक्खियां मकरंद एकत्रित करके लाती हैं उसी के अनुरूप शहद का रंग, खुशबू एवं किस्में रहती हैं। इसलिए अलग–अलग फसलों के शहद की कीमत भी अलग–अलग होती है।

इस व्यवसाय में जो एक कारक इसे आगे बढ़ाने में उपयोगी सिद्ध हुआ वह यह है कि जिस फसल के पास मधुमक्खियों के डिब्बों को रखा जाना है उस फसल के उत्पादन में करीब 10 से 15 प्रतिशत का इजाफा तो निश्चित है, क्योंकि मधुमक्खियां मकरंद एकत्रित करते समय फसलों के फूलों से परागकण अपने पंखों व पैरों के साथ चिपका कर एक फूल से दूसरे फूलों तक ले जाने में सहायक होती हैं जिससे परागण की क्षमता में बढ़ोतरी होने से उत्पादन में वृद्धि हो जाती है। यही वजह है कि कोई भी किसान मधुमक्खियों को अपनी फसलों के पास रखने से मना नहीं करता। ये डिब्बे फसलों से दूर खाली जगह में रखे जाते हैं क्योंकि मजदूर मधुमक्खियां करीब 2 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में उपलब्ध फूलों से मकरंद एकत्रित करके ला सकती हैं। भरतपुर जिले में पिछले तीन वर्ष के दौरान एक स्वयंसेवी संगठन द्वारा एकत्रित किए गए आंकड़ों में यह पाया गया कि सरसों की प्रति एकड़ फसल उत्पादन में लगभग 5 से 8 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जिसमें मधुमक्खी पालन का एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

मधुमक्खी पालन के लिए इटालियन (एपिस मेलीफेरा) नामक मधुमक्खी उपयुक्त सिद्ध हुई है जो इस क्षेत्र की आदर्श मौसमी परिस्थितियों में जीवित रहकर अधिक शहद उत्पादन करती है। मधुमक्खी पालने लिए मधुमक्खियों की मौन कालोनी क्रय करने के लिए कृषि विभाग ने लुधावई गांव के जय सिंह एवं सेवर के लक्ष्मण सिंह को मधुमक्खी प्रजनक के रूप में पंजीकृत कर रखा है। चार छत्तों वाली एक मौन कालोनी की कीमत बक्से सहित करीब 1,400 रुपये है जिस पर राज्य के लघु, सीमांत, अनुसूचित जाति, जनजाति अथवा महिला मधुमक्खी पालकों को 20 बक्सों तक अनुदान दिया जाता है। वित्त वर्ष 2001–02 के दौरान राजस्थान राज्य कृषि विपणन बोर्ड के सहयोग से 7 लाख 60 हजार रुपये का अनुदान उपलब्ध कराया गया साथ ही बैंकों के माध्यम से भी अनुदान उपलब्ध कराया जा रहा है जिसकी सीमा अधिकतम 50 प्रतिशत तक है। मधुमक्खी पालन के व्यवसाय में शहद के अलावा रायल जेली, परागण, मौनी विष, मौनी गोंद एवं मोम का उत्पादन भी होता है किंतु आवश्यक संसाधन व तकनीक सुविधा उपलब्ध नहीं होने के कारण इनका विक्रय मूल्य भी शहद से कई गुना अधिक है। मधुमक्खी पालकों द्वारा तैयार किए गए शहद की अभी कम कीमत मिल रही है क्योंकि इस क्षेत्र में इसे साफ करने के लिए 'रिफायनरी' की स्थापना नहीं हो सकी है। किन्तु इसके लिए भी सतत प्रयास जारी हैं।

इस व्यवसाय में सबसे प्रमुख कठिनाई फूलों की उपलब्धता एवं बढ़ते तापक्रम के नियंत्रण के लिए इन्हें दूसरे क्षेत्रों में लाने ले जाने में आती है। जब सरसों की फसल समाप्त हो जाती है और तापमान में वृद्धि होनी शुरू होती है तो मधुमक्खियों के बक्से को उत्तर प्रदेश के तराई अथवा पंजाब, हरियाणा आदि राज्यों के ऐसे ठंडे क्षेत्रों मे ले जाना पड़ता है। जहां आसानी से फूल उपलब्ध हो सकें। भरतपुर जिले के अधिकांश मधुमक्खी पालक अपने बक्सों को उत्तरांचल के देहरादून क्षेत्र में ले जाते हैं जहां गर्मियों के मौसम में लीची और आम के अलावा अन्य वृक्षों के फूल आसानी से मिल जाते हैं। वर्षा के दिनों में इन्हें बयाना उपखंड के पहाड़ों में ले जाते हैं जहां अनेक जंगली वनस्पतियां फूलने लगती हैं।

मधुमक्खी पालन कार्य शुरू करने वाले जय सिंह, अरविंद शर्मा, लक्ष्मण सिंह, राधा कुमारी, जगन सिंह, सुनील कटारा आदि प्रतिवर्ष 5–6 लाख की वार्षिक आय प्राप्त कर रहे हैं। करीब 50 बाक्स से शुरू करने वाले एक मधुमक्खी पालक की एक वर्ष में मधुमक्खियों की संख्या दोगुनी हो जाती है, साथ ही पहले साल 30 हजार का शुद्ध मुनाफा भी मिल जाता है। किंतु अन्य व्यवसायों की तरह पूर्ण लगन, मेहनत एवं ईमानदारी की भी इस कार्य में अधिक जरूरत है।

भरतपुर जिले में शुरू हुए इस प्रदूषण रहित व्यवसाय से जुड़े युवाओं को मिल रही आशातीत सफलता को देखकर एवं राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराए जा रहे प्रशिक्षण, मार्गदर्शन एवं अनुदान की वजह से यह एक अनुषंगी व्यवसाय के रूप में उभर कर सामने आ रहा है। ❑

विश्व एड्स दिवस पर विशेष

सावधानी बरतें, एड्स से बचें

पी.के. जायसवाल

एड्स एक लाइलाज बीमारी है। अंग्रेजी में इसे *एक्वायर्ड इम्युनो डिफिसियंसी सिंड्रोम* कहा जाता है। एड्स इसका संक्षिप्त नाम है। एड्स का अर्थ है 'जीवनी शक्ति का ह्रास'। यह एचआईवी नामक एक विशेष प्रकार के जीवाणु से फैलता है। यह क्रमशः व्यक्ति की रोगरोधी क्षमता का ह्रास कर देता है जिससे शरीर किसी भी रोग से अपना बचाव करने में समर्थ नहीं रह पाता। मानव सभ्यता के इतिहास में एड्स संभवतः पहला ऐसा रोग है जिसने इतने कम समय में एक भयानक रूप अख्तियार कर लिया है।

कैसे होता है एड्स

- एड्स रोगी का खून किसी स्वस्थ व्यक्ति के खून में मिलने से होता है।
- जिसे एड्स हुआ है उसके साथ यौन संबंध स्थापित करने से।
- रोग के जीवाणु लगे सुइयों, सीरिंजों या अन्य उपकरणों के प्रयोग से।
- संक्रमित माता से उसके गर्भ में पल रहे बच्चे या प्रसव के समय बालक को भी यह रोग हो सकता है।
- संक्रमित व्यक्ति के टूथब्रश या रेजर का इस्तेमाल करने से भी इसके संक्रमण का खतरा रहता है। हालांकि इस प्रकार के संक्रमण की संभावना अन्य सब की अपेक्षा कम होती है।

क्या है एचआईवी?

एचआईवी 1/1000 मिमी व्यास का गोलाकार पिंड होता है जो परपोषी (अर्थात मानव) की कोशिका झिल्ली से प्राप्त दो लिपिड झिल्लियों से घिरा होता है। एचआईवी के संक्रमण से ही एड्स होता है। यह वायरस शरीर में प्रवेश करने के बाद धीरे–धीरे उस व्यक्ति की रोगों से लड़ने की क्षमता को कम करता जाता है। एचआईवी का पूरा नाम *ह्यूमन इम्युनो डिफिसियंसी वायरस* है। सर्वप्रथम पेरिस के पाश्चर इंस्टीट्यूट में अप्रैल 1984 में इस वायरस की खोज हुई थी। यह वायरस टी–4 लिम्फोसाइट सेल अथवा सहायक सेल पर आक्रमण करता है और कोशिका में प्रवेश कर जाता है। फलस्वरूप शरीर का प्रतिरक्षा तंत्र (इम्यून सिस्टम) धीरे–धीरे बुरी तरह कमजोर हो जाता है। प्रतिरोधी क्षमता के अत्यधिक क्षीण हो जाने पर व्यक्ति एड्स का शिकार हो जाता है। एचआईवी संक्रमण की पुष्टि 6 से 12 हफ्ते के बाद ही परीक्षण कराने पर हो जाती है। परंतु इसकी खासियत यह है कि यह अपना स्वरूप और चरित्र बहुत तेजी से बदलता है।

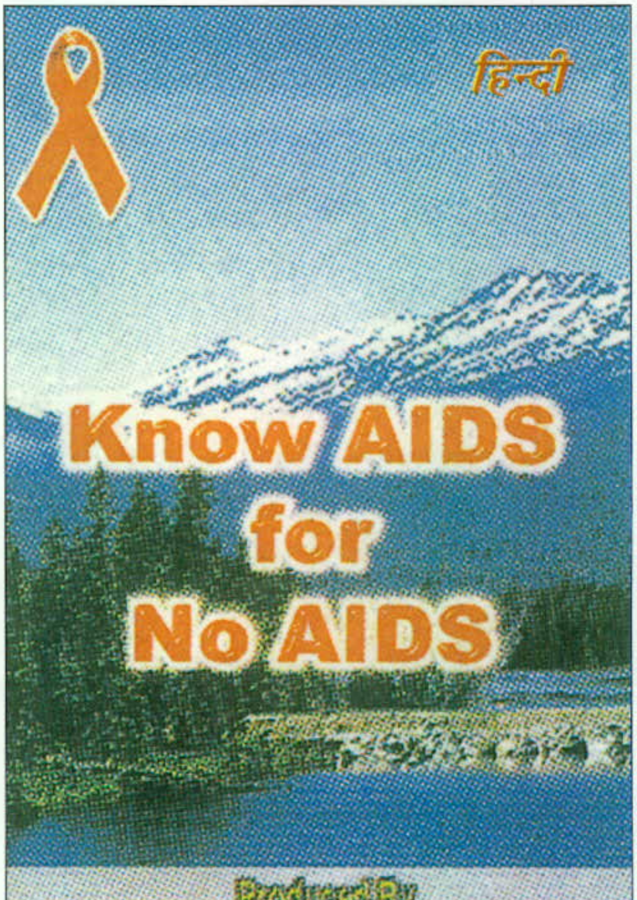

एड्स के लक्षण

एचआईवी से संक्रमित व्यक्तियों में निम्नलिखित में से कोई एक या एक से अधिक लक्षण पाए जा सकते हैं :

- शरीर का वजन अप्रत्याशित रूप से घटना;
- एक महीने या अधिक समय तक पेट की बीमारी का बना रहना;
- लंबे समय तक बुखार रहना जिसका स्पष्ट कारण पता नहीं चलता है;
- भयंकर खांसी, सारे शरीर में खुजली का होना;
- लसिका ग्रंथियों में सूजन हो जाना;
- कई सप्ताह तक रात में पसीना आना;

- मुंह में सफेद रंग के दाग या सूजन हो जाना;
- त्वचा, नाक व पलकों पर सूजन का होना तथा
- भूख में कमी।

गौरतलब है कि ये सारे लक्षण हमेशा एड्स के रोगी को ही नहीं होते बल्कि अन्य बीमारियों से पीड़ित लोगों को भी हो सकते हैं। एड्स की पुष्टि रक्त में एचआईवी के परीक्षण से ही संभव है। इसके लिए डाक्टर द्वारा सर्वप्रथम एलिसा (इंजाइम लिंक्ड इम्युनो सोबेंट एसे) जांच किया जाता है। इससे एड्स जीवाणु का पता लगाया जा सकता है।

एड्स किसे हो सकता है

निम्नलिखित वर्ग के लोगों को एड्स संक्रमण का खतरा अधिक रहता है :

- ऐसे स्त्री–पुरुष जो अनेक लोगों के साथ और प्रायः अपरिचित लोगों के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करते हैं। इनमें देह व्यापार में लिप्त महिलाएं अथवा पुरुष और उनसे संबंध कायम करने वाले पुरुष और स्त्रियां शामिल हैं।
- ऐसे स्त्री–पुरुष जो सुई द्वारा मादक औषधियों का सेवन करते हों।
- ऐसे रोगी जिन्हें बार–बार खून लेने की आवश्यकता होती है।
- एचआईवी अथवा एड्स से संक्रमित मां के गर्भ में पल रहे अथवा उसके नवजात शिशुओं को।

एड्स संक्रमण के लिए जिम्मेदार कौन?

एड्स संक्रमण के लिए निम्नलिखित वर्ग के लोगों को विशेष को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है :

- पश्चिम संस्कृति में पलने वाले वे लोग जो उन्मुक्त यौन संबंधों को खुली छूट देते हैं।
- राष्ट्रीय राजमार्ग के किनारे बसे वे समूह जो वेश्यावृत्ति के लिए जिम्मेदार हैं।
- पेशेवर रक्तदाताओं का समूह।
- माताओं का वह वर्ग जो एचआईवी पाजीटिव है, वे अपने बच्चों में संक्रमण फैलाने का माध्यम बनती हैं।
- राष्ट्रीय राजमार्ग पर चलने वाले वे ट्रक ड्राइवर जो पराई महिला अथवा शरीर व्यवसाय में लिप्त महिला के साथ यौन संबंध रखते हैं।
- ऐसे स्त्री–पुरुष जो मादक पदार्थ लेने के आदी बन चुके हैं।
- वे लोग जो यौन संबंधों को केवल मनोरंजन का साधन मानते हैं।

एड्स से कैसे बचें?

एड्स एक असाध्य रोग है, परंतु इससे घबराने की आवश्यकता नहीं है। इस रोग से बचाव के उपाय हैं। बचाव के तरीके बहुत आसान हैं। इसके लिए हमें निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :

सरकार ग्रामीण जनता को एड्स जैसी जानलेवा बीमारी के बारे में जागरूक करने के लिए पर्याप्त उपाय कर रही है। केंद्र सरकार ने एड्स पर नियंत्रण एवं इसकी रोकथाम के लिए एक विशेष राष्ट्रीय नीति तैयार की है। इस नीति का मुख्य उद्देश्य सरकार के बाहर तथा भीतर एड्स के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना है। सरकार एचआईवी रोगियों के सभी मूल अधिकारों तथा शिक्षा के लिए समान अधिकार देने के लिए वचनबद्ध है।

- एक ही सहभागी के साथ यौन संबंध स्थापित करें। ध्यान रखें कि सहभागी को एड्स संक्रमण न हो।
- विकृत यौन संबंधों से बचें।
- किसी रोगी के उपयोग में लाई गई सुई का उपयोग न करें। केवल डिस्पोजल सुइयों का इस्तेमाल करें।
- एड्स से पीड़ित महिलाओं को गर्भ धारण नहीं करना चाहिए। गर्भ धारण से एड्स अथवा एचआईवी महिला द्वारा जन्म दिए गए बच्चे में एड्स की पूर्ण संभावना होती है।
- किसी अन्य के द्वारा इस्तेमाल की गई सुई को पुनः प्रयोग में नहीं लाना चाहिए। खासतौर पर उन व्यक्तियों को जो सुइयों द्वारा नशीले पदार्थों का सेवन करते हैं।
- एड्स रोगी के लिए इस्तेमाल की गई सुइयों, रुई पट्टी आदि को इस्तेमाल के बाद तुरंत नष्ट कर देना चाहिए।

इनसे एड्स नहीं होता है

एड्स के बारे में पूरी जानकारी तथा सुनिश्चित जांच के अभाव में तमाम तरह की अफवाहें फैल जाती हैं जोकि हमारे समाज के लिए हितकर नहीं है। अतः यह जानना आवश्यक है कि किन–किन चीजों से एड्स होने का खतरा नहीं होता है :

- एड्स की बीमारी छुआछूत से नहीं होती है। अतः आलिंगन या सामान्य चुंबन लेने से एड्स नहीं होता है।
- एड्स रोगी के साथ एक ही घर में रहने, एक साथ खानपान करने तथा एक ही शौचालय का प्रयोग करने से एड्स नहीं होता है।
- एड्स रोगी से गले मिलने, हाथ मिलाने या उसके साथ क्लास में पढ़ने से यह रोग नहीं होता है।
- एड्स रोगी के छींकने, खांसने तथा एक दूसरे के कपड़े पहनने से भी यह रोग नहीं होता है।
- मच्छर, मक्खी व कीड़े–मकोड़े भी यह रोग नहीं फैलाते हैं।

एचआईवी संक्रमण की दर

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार एड्स वायरस (एचआईवी) अब दुनिया के 173 देशों में प्रवेश कर चुका है। रिपोर्ट में अनुमान लगाया है कि पूरे विश्व में तीन करोड़ व्यक्ति एचआईवी की चपेट में आ चुके हैं। इनमें 90 प्रतिशत विकासशील देशों के निवासी हैं। ऐसी आशंका व्यक्त की जाती है कि समूचे विश्व में अब तक 40 लाख से अधिक लोग काल के गाल में समा चुके हैं।

भारत में एचआईवी संक्रमण की दर इस समय 21.05 प्रति हजार पाई गई है।

गांवों में भी एड्स

भारत में एड्स की बीमारी केवल शहरों तक ही सीमित है, ऐसा नहीं है। एड्स गांवों में भी दस्तक दे चुका है। गांवों में एड्स के प्रसार का सबसे बड़ा कारण असुरक्षित एवं सहज यौन संबंध बताया जा रहा है। राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) की नवीनतम अध्ययन रिपोर्ट में तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र के शहरी इलाकों की अपेक्षा ग्रामीण अंचलों में एचआईवी पाजीटिव रोगियों की संख्या अधिक दर्शाई गई है।

यह एक अहम सवाल है कि एड्स की बीमारी गांवों तक कैसे पहुंची? चूंकि हमारी जनसंख्या का अधिकांश भाग आज भी गांवों में निवास करता है वहां के लोग प्रायः कम पढ़े–लिखे होने के कारण और सूचना के अभाव के कारण बीमारियों के प्रति पर्याप्त जागरूक नहीं होते हैं। फलस्वरूप वे एड्स संक्रमण से अपना बचाव नहीं कर पाते। इस तरह से जाने–अनजाने वे एड्स के शिकार हो जाते हैं। गांवों में इसके फैलने के तीन प्रमुख कारण हैं : गरीबी, अशिक्षा तथा कुपोषण। रोजी–रोटी की तलाश में महानगरों को जाने वाले गरीब, अनपढ़ लोग यह महानगरीय सौगात गांवों व कस्बों तक पहुंचा रहे हैं। चिकित्सक और विशेषज्ञ भी अब यह मानने लगे हैं कि गरीबी व अशिक्षा के फलस्वरूप विस्थापन की तीव्र प्रवृत्ति के कारण पूर्वांचल के अधिकांश क्षेत्रों में यह बीमारी तेजी से फैल रही है।

जनजागरण की आवश्यकता

एड्स की रोकथाम हेतु कोई सुदृढ़ व्यवस्था अभी गांवों में नहीं है। विकास खंडों के अधीन कुछ स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना अवश्य की गई है, परंतु इनकी हालत पहले से ही खस्ता है। अतः यह जरूरी है कि एड्स की रोकथाम के लिए सुनिश्चित कदम उठाए जाएं। खास तौर से ग्रामीण इलाकों में इससे बचाव के उपायों को प्रोत्साहित करने की जरूरत है। आज भी अधिकांश ग्रामीण महिलाएं एड्स और एचआईवी आदि जैसी बीमारियों के बारे में अनभिज्ञ हैं। एक सर्वेक्षण से पता चलता है कि एड्स के बारे में जानने वाली शहरी महिलाओं का प्रतिशत 70.3 है जबकि ग्रामीण महिलाओं में यह प्रतिशत केवल 29.7 है। अब तक उपलब्ध चिकित्सकीय जानकारी के अनुसार कुछ औषधियों के प्रयोग के द्वारा रोगी को कुछ समय तक जीवित रखा जा सकता है। दुनिया के कई देशों में इस पर शोध चल रहे हैं। भारत भी एड्स पर काबू पाने के लिए प्रयत्नशील है पर अभी तक सफलता हाथ नहीं लगी है। इस हालत में इस जानलेवा बीमारी से निजात हम समुचित जानकारी हासिल करके, व्यापक जनजागरण करके और लोगों को उचित सलाह देकर ही पा सकते हैं।

अधिकांश विशेषज्ञों तथा शोधकर्ताओं का मानना है कि एड्स पर प्रिंट मीडिया तथा इलेक्ट्रानिक कवरेज पर्याप्त नहीं है। इनमें और वृद्धि की जरूरत है। संदेश जो दिए जाते हैं वे सही ढंग से नहीं पहुंचते हैं। अतः संदेश सही एवं तथ्यपरक प्रसारित किए जाने चाहिए। सच है कि एड्स से बचाव के लिए उचित जानकारी और सूचना के अलावा दूसरा कोई विकल्प नहीं है। ऐसे में लोगों के बीच यह संदेश प्रसारित किया जाना चाहिए कि भारत की संस्कृति मनुष्य को प्रकृति के बंधन तोड़ना नहीं सिखाती। इस तरह से वह सैकड़ों साल तक निरोगी जीवन जी सकता है। लोगों को बताना होगा कि "मैं भला तो जग भला" की नीति अपनाएं।

सरकार के प्रयास

सरकार ग्रामीण जनता को एड्स जैसी जानलेवा बीमारी के बारे में जागरूक करने के लिए पर्याप्त उपाय कर रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में जो एड्स के रोगी हैं उन्हें उपलब्ध प्रभावी दवाइयां तथा उचित उपचार की व्यवस्था मुहैया कराना जरूरी है। बचाव के वास्ते सरकार द्वारा कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। सूचना और प्रसारण मंत्रालय के विभिन्न सूचना माध्यमों, राज्य जनशिक्षण माध्यमों तथा अन्य प्रचार एजेंसियों/संगठनों द्वारा इसका कार्यान्वयन किया जा रहा है। मंत्रालय ने एड्स की रोकथाम जैसे विषय पर संदेश प्रसारित करने में अपना विशेष योगदान दिया है। आकाशवाणी डाक्टरों के संदेश प्रसारित करता है। लोगों के बीच इसके बारे में जागृति पैदा करने के लिए अनेक धारावाहिक भी कमीशन किए गए हैं। सूचना और प्रसारण मंत्रालय के क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय ने परिवार स्वास्थ्य जागरूकता अभियान के दौरान एड्स से संबंधित संदेश विशेषकर ग्रामीण इलाकों में फैलाए। इसके लिए पारंपरिक दृश्य और समाचार माध्यमों के साथ–साथ अंतर–वैयक्तिक संवाद माध्यमों का भी उपयोग किया गया। उल्लेखनीय है कि इस निदेशालय की देशभर के ग्रामीण इलाकों क्षेत्रीय इकाइयां हैं जो इस कार्य को बखूबी अंजाम दे रही हैं। इसके अलावा केंद्र सरकार ने एड्स पर नियंत्रण एवं इसकी रोकथाम के लिए एक विशेष राष्ट्रीय नीति तैयार की है। इस नीति का मुख्य उद्देश्य सरकार के बाहर तथा भीतर एड्स के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना है। सरकार एचआईवी रोगियों के सभी मूल अधिकारों तथा शिक्षा के लिए समान अधिकार देने के लिए वचनबद्ध है।

फिर भी यह सच है कि आज भी हम इस बीमारी के बारे में जागरूकता के क्षेत्र में काफी पीछे हैं। विशेष रूप से ग्रामीण इलाकों में जनजागरण की अभी बहुत कमी है। इसे दृष्टिगत रखते हुए ग्रामीण इलाकों में जागरूकता अभियान युद्ध स्तर पर चलाया जाना चाहिए। इसे और ठोस एवं कारगर बनाने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं, स्वास्थ्यकर्मियों तथा मीडिया के लोगों के बीच सही समन्वय होना चाहिए। ऐसा देखा जा रहा है कि समुचित जानकारी न होने के कारण ही लोग इस बीमारी के शिकार हो रहे हैं। ऐसे में ग्रामीण स्तर के चिकित्सकों को प्रशिक्षित करके एड्स संबंधी ज्ञान का प्रचार–प्रसार करना उचित होगा। स्कूल तथा कालेजों के पाठ्यक्रमों में एड्स जैसे विषय को शामिल कर छात्र/छात्राओं को इसके प्रति जागरूक करना श्रेयष्कर होगा। ❑

बी–5, 20–बी
धवलगिरी अपार्टमेंट
सेक्टर–34, नोएडा

प्रज्ञावेणु : संस्कृत से हिंदी अनुवाद की समस्याएं

डा. हेमंत जोशी*

पुस्तक : प्रज्ञावेणु (गीता का काव्यानुवाद); अनुवादक : उद्भ्रांत; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, नई दिल्ली; मूल्य : 200 रुपये।

विश्व की प्रखरतम रचनाओं को अपनी भाषा में कहने की इच्छा कवियों के मन में हमेशा ही रही है। शेक्सपियर के हेमलेट और रोमियो–जूलियट, उमर ख़ैयाम की रुबाइयात और कृष्ण के उपदेशों की गीता के अनेक अनुवाद इसके प्रमाण हैं। पिछले दिनों रमाकांत शर्मा 'उद्भ्रांत' के ऐसे ही प्रयास के परिणामस्वरूप *भगवद् गीता* का मुक्त छंद में निबद्ध अनुवाद *प्रज्ञावेणु* प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक अनुवाद सिद्धांत की दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके बहाने साहित्य के अनुवाद और किसी शास्त्रीय पुस्तक की भाषा के आधुनिक और समकालीन हिंदी में पुनर्सृजन की समस्या के कई अनछुए पक्षों पर विचार करने का मौका मिलता है। फिर संस्कृत जैसी भाषा, जिसके पाठक उस समाज में हों जिस समाज की प्रचलित भाषा में संस्कृत की ही किसी कृति का पुनर्सृजन किया जा रहा हो तो यह कार्य अपने आप में और भी दुष्कर हो जाता है।

इस अनुवाद के सृजनकर्ता उद्भ्रांत ने भी इस पुस्तक की भूमिका में अनुवाद और पुनर्सृजन की चर्चा करते हुए अंततः अनुवाद को पुनर्सृजन ही कहना पसंद किया है। यहां मैं अनुवाद, पुनर्सृजन और व्याख्या – तीनों शब्दों की एक साथ चर्चा करना चाहता हूं। *प्रज्ञावेणु* पर दूरदर्शन पर हुई चर्चा में नरेंद्र कोहली ने गीता की समकालीनता से संबंधित एक सवाल किया था और उसका जवाब देते हुए भी मुझे किसी साहित्यिक कृति के समकालीन होने या न होने के पीछे किसी कालखंड में उसकी क्या और कैसी व्याख्या हो रही है यही महत्वपूर्ण लगा था। अनुवाद भले ही समाचार का हो या काव्य का, अच्छा हो या बुरा, वह इसी अर्थ में पुनर्सृजन है कि वह मूल पाठ की एक व्याख्या है। यहां जो बात सबसे अधिक ध्यान देने योग्य है – वह यह है कि जिस व्याख्या की हम चर्चा कर रहे हैं वह व्याख्या कोई अमूर्त और स्थाई या फिर शाश्वत नहीं होती। वह व्याख्याकार के जीवन, उसके ज्ञान–संसार, उसके पूर्वाग्रहों और जिस क्षण वह व्याख्या कर रहा है उस क्षण उसकी मनःस्थिति से प्रभावित होती है।

अनुवाद की चर्चा करते समय कवि उद्भ्रांत ने अंग्रेजी के एक विद्वान की पंक्ति का उल्लेख करके अनुवाद की जो दृष्टि प्रतिपादित की है उसे मैं स्वीकार नहीं करता। मुझे समझ नहीं आता कि रामकथा की महत्वपूर्ण लेकिन उपेक्षित नारी *स्वयंप्रभा* पर काव्य लिखने वाले कवि ने इस उक्ति में निहित पुरुषत्व की पड़ताल क्यों नहीं की। महिलाओं में सौंदर्य और सतीत्व एक साथ नहीं होता। जहां तक ऐसा मानने वालों का सवाल है मैं उनसे यही कह सकता हूं कि अगर कहीं आपने जीवन में ऐसा महसूस किया है तो आपकी सौंदर्य और सतीत्व की समझ में निश्चय ही कोई दोष है। पर उद्भ्रांतजी का नारी प्रेम उन्हें उपर्युक्त उक्ति से बांधे रखता है और वह प्रतिक्रिया स्वरूप इस उक्ति में जो परिवर्तन करते हैं वह भी उतना ही दोषपूर्ण है जितनी मूल पंक्ति। लेकिन अनुवाद के संदर्भ में जिस व्याख्या का मैं उल्लेख कर रहा था उसका यह एक सुंदर उदाहरण है। उद्भ्रांत ने अंग्रेजी की मूल उक्ति का पुनर्सृजन किया है और ऐसा करने के लिए जो व्याख्या वांछनीय है उसमें उनके संदर्भ बदल गए और उन्होंने ज्यादा विचार किए बिना कह डाला कि अनुवाद 'भारतीय' महिला जैसा होता है जो अपने हृदय की गहराइयों में सती भी होती है और सुंदर भी। फिर कवि अनुवाद की श्रेष्ठता और सुंदरता की चर्चा में जुट जाते हैं। वास्तव में अनुवाद शास्त्र में अभी तक अनुवाद के सौंदर्य शास्त्र पर गंभीर चिंतन नहीं हुआ है।

मुझे हमेशा ही लगता रहा है कि सौंदर्य की अधिकांश परिभाषाएं एकम् सत्यम् की संकल्पना से प्रभावित रही हैं। मैं यहां सत्य के एक होने या न होने से उतना त्रस्त नहीं हूं जितना कि इस दर्शन के दृष्टिदोष से। कई छोटे–छोटे सच मिलकर भी शाश्वत सत्य का चेहरा बना सकते हैं, और यह कोई मेरा विचार नहीं है – यह तो पंचतंत्र की चार अंधों की कहानी में भी भलीभांति दर्शाया गया है।

संस्कृत से हिन्दी अनुवाद की कई समस्याओं का जिक्र स्वयं उद्भ्रांत ने किया है और काफी कुछ उनके अनुवादों में भी मिलता है। भूमिका में कवि ने 'पर्याप्त' और 'अपर्याप्त' जैसे शब्दों के तत्सम और तद्भव अर्थों का उल्लेख किया है। इसी वजह से उन्होंने गीता के निम्नलिखित श्लोक का अनुवाद करते

*सहायक प्रोफेसर, भारतीय जनसंचार संस्थान, नई दिल्ली।

समय शब्दों को बदल दिया है :

अपर्याप्तम् तदस्माकम् बलम् भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तम् त्विदमेतेषाम् बलम् भीमाभिरक्षिताम्।।

उपर्युक्त श्लोक का अनुवाद करते समय उन्होंने शब्दों को बदलकर अपरिमित और परिमित कर दिया और श्लोक का अनुवाद हो गया – *भीष्म–रक्षित अपरिमित यह सैन्य है दुर्जेय सब विधि/और सक्षम जीतने के लिए परिमित भीमरक्षित सैन्य को।* इस श्लोक के अनुवाद के साथ कवि ने एक टिप्पणी भी की है। जहां तक मुझे ज्ञात है, इस श्लोक में दोनों सेनाओं को अपराजेय बतलाया गया है और कौरवों की सेना को 'अपर्याप्त' कहकर भीष्म के बल की महत्ता दर्शाई गई है। सोचकर देखिए जिस सेना में कृष्ण भले ही सारथी हों उसके विषय में यह कल्पना भी कैसे की जा सकती है कि कोई उसे जीत भी सकेगा। दरअसल यदि संस्कृत का शब्दकोश देखा जाए तो अपर्याप्त का पर्याय केवल अपरिमित नहीं है बल्कि इसके कई अन्य अर्थ भी हैं। वामन शिवराम आप्टे के संस्कृत–हिंदी कोश में अपर्याप्त के तीन अर्थ दिए गए हैं। पहला अर्थ है अपूर्ण का काफी न होना, दूसरा है असीमित और तीसरा है अयोग्य, असमर्थ या असक्षम। यहां मेरा मत है कि तीसरा अर्थ ही ठीक है, क्योंकि इस अर्थ के रखने से यह भाव प्रकट होता है कि भीष्म के बल से रक्षित होने के बावजूद कौरवों की सेना युद्ध जीतने में असमर्थ है – जबकि भीम के बल से रक्षित पांडवों की सेना समर्थ है, क्योंकि उसे कृष्ण जैसा योद्धा हासिल है – भले ही सारथी की हैसियत से। इस जगह उद्भ्रांत 'परिमित'–'अपरिमित' के पचड़े में नाहक पड़ गए हैं।

नरेंद्र कोहली ने 'दहति' और 'शोष्यति' शब्दों के अनुवाद पर प्रश्न उठाया है। उनका कहना है कि 'दहति' का अनुवाद जलाना और 'शोष्यति' का सुखाना ही होना चाहिए फिर कवि ने 'छू न सकना' और 'सुखाना' या 'उड़ाना' क्योंकर किया है? यह विवाद निश्चय ही बेहद रुचिकर है, क्योंकि कवि ने इन शब्दों के अनुवाद के साथ टिप्पणी भी दी है। यदि आत्मा को एक अमूर्त संकल्पना माना जाए तो यह कहा जा सकता है कि अग्नि भी उसे छू नहीं सकती। अब यह बात और है कि संस्कृत में इसे मूर्त वस्तु की तरह देखा गया है तो यह कहा गया है कि अग्नि उसे जला नहीं सकती। पर कवि यदि एक जगह काव्यात्मकता को इतना महत्व देता है तो उसकी अगली पंक्ति तक आते–आते उसकी काव्यात्मकता को कौन सी वायु उड़ा ले जाती है कि वह उसी आत्मा को मूर्त वस्तु मान बैठता है और वायु द्वारा उसे उड़ा ले जाने के संदर्भ में वायु के गुण की चर्चा करने लगता है? मेरे मत में कवि को इस जगह भी आत्मा के गुण की ही बात करनी चाहिए न कि वायु या अग्नि के गुणों की। इस संदर्भ में इसी के आगे के 24वें और 25वें श्लोकों को यदि ध्यान से पढ़ा जाए तो उनमें आत्मा के गुणों और उसके सूक्ष्म स्वरूप की चर्चा की गई है। शरीर स्थूल है, नश्वर है और आत्मा सूक्ष्म, शाश्वत और सर्वव्यापी है। जो सर्वव्यापी है – उसका जलना क्या, सूखना क्या और उड़ना क्या?

इस अनुवाद में एक और पक्ष पर गौर करने की आवश्यकता है। गीता के श्लोकों में छंद वार्णिक हैं, जबकि हिंदी की कविता अधिकतर मात्रिक छंदों पर ही निर्भर करती है। इसीलिए –

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

इसकी लय उसके वार्णिक छंद से उपजती है जो *हे भरत! जब–जब पतन हो धर्म का, अपधर्म की हो वृद्धि, तब–तब मैं* – (किसी भी जीव का आकार लेकर) – *प्रकट होता हूं स्वयं। (हे भरत!) जब–जब समय की मांग हो, मैं साधु–जन–उद्धार–हित, और दुष्ट–जन के नाश को, सद्धर्म की संस्थापना के लिए लेता जन्म हूं।।* में मुक्त छंद होने के बावजूद नहीं आ पाती। यह श्लोक छंदचर्चा के लिए मैंने इसलिए चुना कि गोस्वामी तुलसीदास ने भी इसी श्लोक का पुनर्सृजन किया है, जो जुबान पर आसानी से चढ़ भी जाता है और उसके अर्थ को भी बहुत सरलता से खोलने में सक्षम है। तुलसी कहते हैं :

जब–जब होय धरम की हानी।
बढ़हिं असुर अधम अभिमानी।।
तब–तब प्रभु लै मनुज शरीरा।
हरें सकल दुख सज्जन पीरा।।

यह प्रसंग यह भी स्पष्ट जतला देता है कि उद्भ्रांत ने समकालीन मुहावरे में गीता का पुनर्सृजन तो करना चाहा, लेकिन वह किन्हीं अज्ञात दबावों के चलते केवल अनुवाद ही प्रस्तुत कर पाए हैं और उनके इस अनुवाद में तुलसी जैसी उपर्युक्त सृजनात्मकता की कमी साफ दिखलाई पड़ती है।

किसी भी साहित्यिक कृति की यह विशेषता होती है कि वह एक संदर्भ–मुक्त संरचना होती है और विभिन्न परिस्थितियों, विभिन्न समाजों, विभिन्न संस्कृतियों और विभिन्न युगों में उसकी नई–नई व्याख्याएं हो सकती हैं। *श्रीमद्भगवद् गीता* भी एक ऐसी ही कृति है और यही वजह है कि इसके रचनाकाल से अब तक इसकी असंख्य व्याख्याएं और अनगिनत टीकाएं हो चुकी हैं। गांधी, तिलक, राधाकृष्ण और विवेकानंद की व्याख्याएं हों या विनोबा का मराठी काव्यानुवाद *गीताई* हो, हरिवंशराय 'बच्चन' के अनुवाद *जनगीता* या *नागरगीता*, और मैथिलीशरण गुप्त आदि के अनुवाद इस बात के प्रमाण हैं कि इस कृति ने भारतीय मानस को और विशेषकर कवि मन को हमेशा ही आकर्षित किया है। कवि उद्भ्रांत का यह अनुवाद भी उसी श्रृंखला की अगली कड़ी है।

इस अनुवाद की विशेषता यह है कि शहरी, महानगरीय, आधुनिक और उत्तरआधुनिक संदर्भों में यह एक सृजनकर्ता की अपने अतीत से जुड़ने और उस कालखंड की भाषा में फिर से नए प्राण फूंकने की एक अद्भुत चेष्टा है। यह जानते हुए भी कि भाषा वही है, लेकिन उसके अर्थों में तद्भव और तत्सम का भेद है – कवि ने अपनी भाषा के जरिए उस भेद को पाटने का प्रयत्न किया है। लेकिन उद्भ्रांत के इस प्रयास से यह भी भलीभांति प्रकट होता है कि समीपस्थ भाषाओं के अनुवाद में तमाम सृजनात्मकता के बावजूद कठिनाइयां अनेक हैं, जबकि अन्य भाषाई परिवारों या उसी परिवार की दूरस्थ भाषाओं के अनुवाद में भले ही संस्कृति के अनजानेपन आदि की मुश्किलात हों – भाषिक स्तर पर कठिनाई नहीं होती। ❑

सी–3, प्रेस एन्क्लेव
साकेत, नई दिल्ली–110017

पंचायतीराज व्यवस्था में दस्तक देती महिला

शमशेर अहमद खान

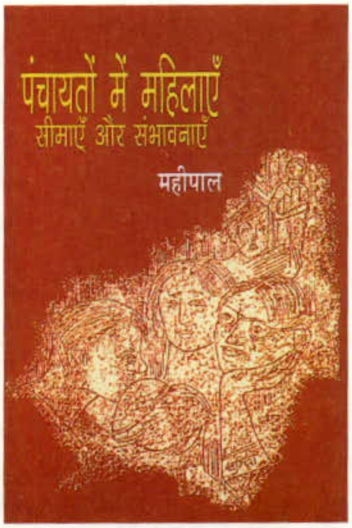

पुस्तक : पंचायतों में महिलाएं सीमाएं और संभावनाएं, लेखक : डा. महीपाल, प्रकाशन : सारांश प्रकाशन, दिल्ली–हैदराबाद, वर्ष : 2002, मूल्य : 125 रुपये।

पंचायतों में महिलाएं : सीमाएं और संभावनाएं शीर्षक पुस्तक पाठक को महिलाओं की जमीनी हकीकत का एहसास कराती है। तीन अध्यायों में वर्गीकृत की भूमिका में उन्होंने महिलाओं की स्थिति स्पष्ट करते हुए लिखा है, "भारत में पंचायतों की परंपरा तो बहुत पुरानी है लेकिन इनमें महिलाओं की भागीदारी की परंपरा आजादी के बाद की ही है।"

पुस्तक के प्रथम भाग के 'पृष्ठभूमि' शीर्षक पहले अध्याय में लेखक ने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में सुदूर अतीत में महिलाओं की स्थिति का सम्यक आकलन करते हुए पंचायतीराज व्यवस्था का जायजा लिया है। तत्पश्चात पंचायतीराज को संविधान में जोड़ने की रोचक घटना का वृतांत दिया है। इसी अध्याय में स्वतंत्र भारत में पंचायतीराज व्यवस्था एवं महिलाओं की भागीदारी उपशीर्षक के अंतर्गत समितियों की रिपोर्टों, अन्य प्रयासों व सिफारिशों के क्रियान्वयन, संविधान संशोधन व विभिन्न राज्यों में महिलाओं की वर्तमान स्थिति की जानकारी दी गई है।

पुस्तक का दूसरा भाग चार अध्यायों में बंटा है। प्रथम अध्याय 'सामाजिक सीमाएं' शीर्षक से है। इस अध्याय में पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था, कर्म की धारणा, रीतिरिवाज व रूढ़ियां, शिक्षा व स्वास्थ्य का आकलन किया गया है। आर्थिक सीमाएं इस भाग का दूसरा अध्याय है। इस अध्याय में महिला प्रतिनिधियों की आर्थिक सीमाओं का युक्ति–युक्ति आकलन है। इसी प्रकार तीसरे व चौथे अध्याय क्रमशः राजनीतिक व प्रशासनिक सीमाएं हैं। राजनीतिक सीमाओं के विश्लेषण में यह स्पष्ट किया गया है कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की वांछित भागीदारी नहीं है। राज्य पंचायतीराज अधिनियमों में अनेक कमियां हैं जो पंचायतों को स्वायत्तशासी संस्था बनाने में बाधा उत्पन्न करती हैं। पंचायत चुनाव में चुनाव से पहले, चुनाव के दौरान व बाद में हिंसा, जात–पांत, गुटबाजी का वातावरण महिलाओं को निरुत्साहित करता है। जबकि प्रशासनिक सीमाएं अध्याय में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि पुरुष प्रधान व्यवस्था में महिलाएं आगे आएं।

पुस्तक का तीसरा और अंतिम भाग 'संभावनाएं' शीर्षक से है। इसकी विस्तृत जानकारी को सात अध्यायों में बांटा गया है। ग्रामीण विकास व गरीबी उन्मूलन व कार्यक्रमों में 'महिलाओं की भागीदारी' अध्याय में ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों जैसे 'ग्रामीण महिला एवं बाल विकास योजना' (ड्वाकरा), 'समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम' (आईआरडीपी), ग्रामीण युवा रोजगार प्रशिक्षण योजना (ट्राइसेम), स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, जवाहर रोजगार योजना, इंदिरा आवास योजना, भूमि आबंटन, राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम, लोक कार्यक्रम और ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद (कपार्ट) द्वारा सहायता, जीवन गुणवत्ता कार्यक्रम, राष्ट्रीय महिला कोष आदि के कार्यकलाप तथा उनकी इतिवृत्तात्मक जानकारी दी गई है। इस भाग के दूसरे अध्याय 'प्रशिक्षण कार्यक्रम में सरकार व स्वैच्छिक संस्थाओं का योगदान' शीर्षक से अभिहित है जिसमें राज्य सरकारों व स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका का सम्यक आकलन प्रस्तुत किया गया है। नौवां अध्याय 'महिलाओं की मुखरता : कुछ मिसालें' शीर्षक से है। इसमें देश के विभिन्न राज्यों की महिलाओं की मिसालें देकर उनके समर्पण एवं कर्तव्यनिष्ठा को उजागर करने का प्रयास किया गया है। आठवां अध्याय है 'प्रशिक्षण कार्यक्रम में सरकार व स्वैच्छिक संस्थाओं का योगदान' जबकि दसवां अध्याय 'संसद व विधान सभाओं में महिला आरक्षण' की स्थिति का बोध कराता है। ग्यारहवें अध्याय में 'राष्ट्र की शक्ति संपन्नता के लिए राष्ट्रीय नीति' का खुलासा किया गया है। इसमें राष्ट्रीय नीति के उद्देश्य के साथ–साथ नीति के मुख्य घटक की बिंदुवार सूचना से अवगत कराया गया है। बारहवां अध्याय नौवीं पंचवर्षीय योजना एवं महिलाओं की स्थिति का वस्तुपरक विवरण देता है और अंतिम अध्याय में निष्कर्ष दिया गया है।

इस पुस्तक को जिस कलेवर में पाठकों के लिए प्रस्तुत किया है वह न सिर्फ इस क्षेत्र से जुड़ी महिलाओं, स्वैच्छिक संस्थाओं, राज्य सरकारों, शोधार्थियों के लिए मार्गदर्शक की भूमिका अदा करेगी बल्कि आम पाठक भी इसकी जानकारी से भरपूर लाभ उठा सकेंगे। इस पुस्तक की विशेष शैली यह है कि जहां इसमें सरकारी तकनीकी शब्दावली का सरलीकरण किया गया है वहीं प्रत्येक अध्याय में संदर्भित विषय को निष्कर्ष रूप में दिया गया है। किसी भी पुस्तक में इसका नया प्रयोग है जो स्वागत योग्य है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि समीक्ष्य पुस्तक सभी दृष्टियों से अपने विषय के प्रतिपादन में पूरी तरह सफल रही है। ❑

एम–69/ए, संजय नगर
सेक्टर–23, गाजियाबाद–201002

विकास प्रक्रिया का संवाहक है प्रकाशन विभाग

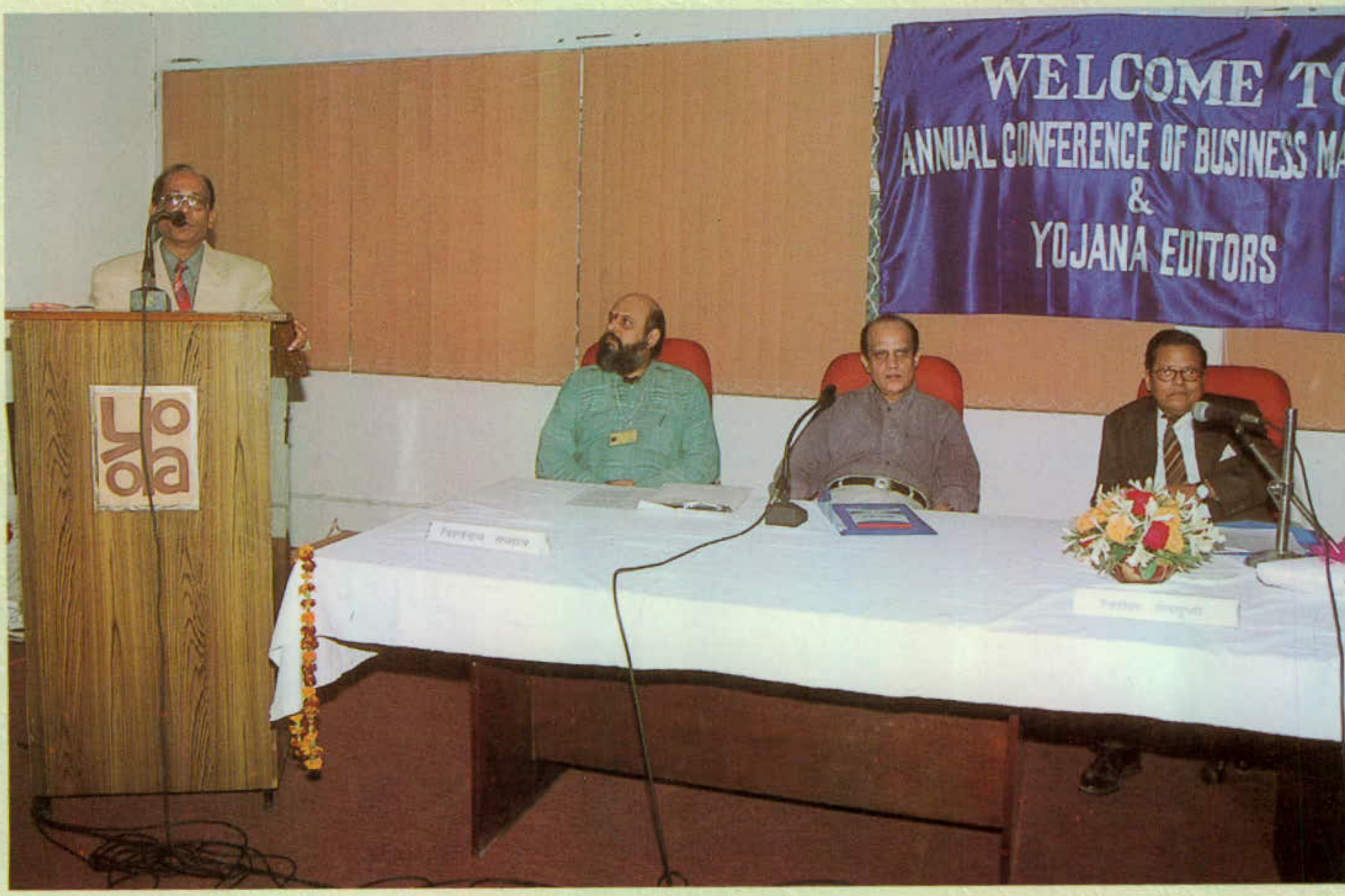

सम्मेलन को संबोधित करते हुए प्रकाशन विभाग के निदेशक प्रमोद शरण भटनागर। मंच पर बैठे हैं (दाएं से) अर्थशास्त्री और सांसद डा. नितीश सेनगुप्ता, विभाग के संयुक्त निदेशक एम.के.त्रेहन तथा विश्वनाथ रामशेष

विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े अग्रणी विद्वानों ने प्रकाशन विभाग को देश की विकासात्मक गतिविधियों का संवाहक कहा है। प्रकाशन विभाग द्वारा 12 भारतीय भाषाओं में प्रकाशित की जाने वाली पत्रिका *योजना* के देशभर से आए संपादकों और व्यापार प्रबंधकों के द्वि–दिवसीय सम्मेलन में उदघाटन व्याख्यान देते हुए नई दिल्ली स्थित श्रीरामकृष्ण मिशन के सचिव स्वामी गोकुलानंद ने नैतिकता को एक जरूरी उपकरण बताते हुए प्रकाशन कार्य से संबद्ध लोगों से इसे विवेकसम्मत रूप से कार्यकौशल के साथ–साथ उपयोग में लेने पर बल दिया। सम्मेलन गत 12–13 नंवबर को नई दिल्ली स्थित प्रकाशन विभाग के मुख्यालय में संपन्न हुआ। प्रमुख तकनीकी विशेषज्ञ तथा आईआईटी, चेन्नई के पूर्व निदेशक पदमभूषण प्रो. पी. वी. इंदीरसन ने *योजना* के संपादकों से अपनी पत्रिका के जरिये सरकार के सकारात्मक प्रयासों और ठोस परिणामों को प्रस्तुत करने का आग्रह किया। उन्होने बताया कि *योजना* की पहुंच व्यापक है। इसलिए इसके कंधों पर सरकार और जनता के बीच वास्तविक अर्थों में संवाद–सेतु के रूप में काम करने का महती दायित्व भी है।

प्रखर अर्थशास्त्री और संसद सदस्य डा. नितीश सेनगुप्ता ने अपने समापन भाषण में सरकार के सूचनातंत्र में जवाबदेही को उचित महत्व देते हुए संपादकों की भूमिका पर प्रकाश डाला। डा. सेनगुप्ता ने कहा कि संपादकों और व्यापार व्यवस्थापकों सहित प्रकाशन विभाग के अधिकारियों की स्थिति थोड़ी विशिष्ट है। वे विकास गतिविधियों का एक अंग हैं क्योंकि सरकार के सूचनातंत्र और सूचना प्रसार का हिस्सा होने के कारण विकासात्मक गतिविधियों के वे प्रत्यक्षदर्शी होते हैं। ❑

आर. एन. / 708 / 57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी (डी.एल.) 12057 / 2002
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, भुगतान के साथ आर.एम.एस. दिल्ली में
डाक में डालने के लिए लाइसेंस

R.N./708/57
P&T Regd. No. D(DL) 12057/2002
ISSN 0971-8451,
Licenced to Post with payment at R.M.S. Delhi.

प्रमोद शरण भटनागर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली–110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया–II, नई दिल्ली–20 : **कार्यकारी संपादक : राकेश रेणु**